वन वैभव

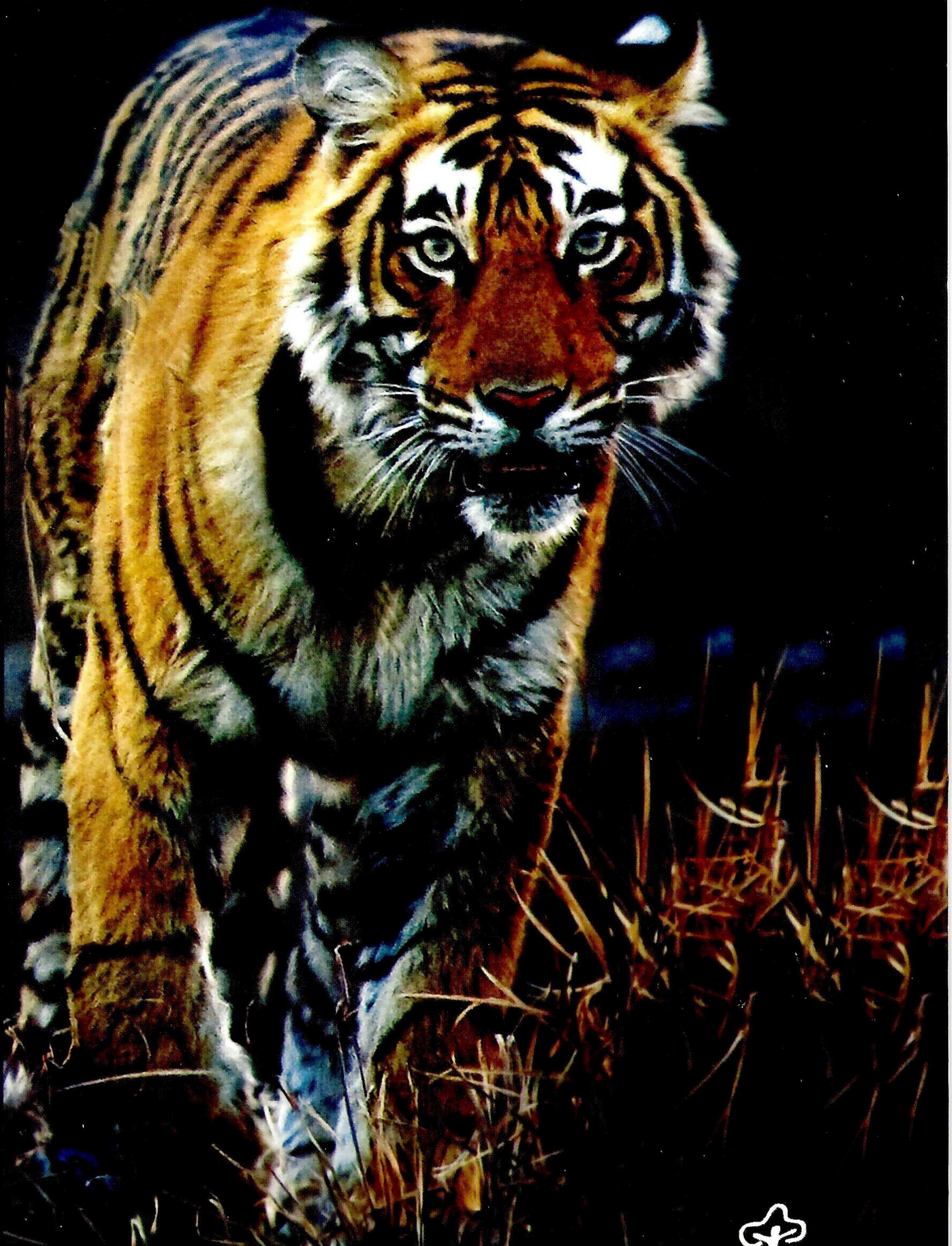

भारतीय वन्यजीव संस्थान
Wildlife Institute of India

जहाँ है हरियाली ।
वहाँ है खुशहाली ॥

सम्पादक मण्डल
वी.पी. उनियाल
राजेश थापा
कृष्ण कुमार श्रीवास्तव
ए.के. दुबे
बलजीत कौर

ले–आउट, सज्जा व मुद्रण
वीरेन्द्र शर्मा

हिन्दी टंकण
प्यारचन्द सिंह असवाल

वर्ष 2008

विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति

1.	श्री ए0 उदयन, कुलसचिव	–	अध्यक्ष
2.	डा0 वी0पी0 उनियाल, वैज्ञानिक–डी	–	सदस्य
3.	श्री राजेश थापा, सिस्टम मैनेजर	–	सदस्य
4.	श्री के0के0 श्रीवास्तव, सम्पादक	–	सदस्य
5.	श्री आशुतोष शर्मा, शैक्षिणिक अधिकारी	–	सदस्य
6.	श्री पी0के0 अग्रवाल, प्रशासनिक अधिकारी	–	सदस्य
7.	श्री एस0के0 खन्तवाल, आं0 लेखा परीक्षा अधिकारी	–	सदस्य
8.	श्री ए0के0 दुबे, लेखाकार	–	सदस्य
9.	श्री वाई0एस0 वर्मा, पुस्तकालयध्यक्ष ग्रेड–4(2)	–	सदस्य
10.	श्री भुवन चन्द्र उपाध्याय, परिचर	–	सदस्य
11.	श्री नवीन चन्द्र काण्डपाल, वाहन चालक	–	सदस्य
12.	श्रीमति बलजीत कौर, हिन्दी अनुवादक	–	सदस्य–सचिव

पत्रिका में छपे लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार है। यह आवश्यक नहीं कि सम्पादक मण्डल / प्रकाशक / विभाग इन विचारों से सहमत हों। लेख की मौलिकता एवं प्रमाणिकता के लिए लेखक उत्तरदायी है।

–सम्पादक मण्डल

संदेश

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि भारतीय वन्यजीव संस्थान की गृह–पत्रिका "वन–वैभव" के द्वितीय अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। राजभाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से इस पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पत्रिका में वन्यजीव संरक्षण, पर्यावरण तथा अन्य विविध विषयों से सम्बन्धित लेख शामिल किये गये हैं। मुझे आशा है कि पाठक राजभाषा हिन्दी में प्रकाशित इन रचनाओं से लाभान्वित होंगे।

संस्थान के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अनुरोध है कि वे सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें व हिन्दी में कार्य करने के लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करें।

पत्रिका की सफलता हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

(पी.आर. सिन्हा)
निदेशक

सम्पादकीय

विचारों को काग़ज़ पर उतार देना मात्र ही लेखन नहीं होता, लेखन तब तक पूर्णता को प्राप्त नहीं करता, जब तक वह सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय की भावना व्यक्त नहीं करता। मानवीय चिन्ताओं और प्राणीमात्र के हित चिन्तन से लेखन की सार्थकता बढ़ती है। बेजुबानों की परेशानियों को मानवीय सोच के दायरे में लाने का प्रयास सराहनीय होता है। भारतीय वन्यजीव संस्थान परिवार के कुछ नव–कलमवीरों ने अपनी भावनायें इसी अन्तर्निहित विचार के साथ काग़ज़ पर उकेरी हैं। स्वाभाविक है कि नव–लेखक में वह परिपक्वता सम्भवतः न देखने को मिले, किन्तु निवेदन इस बात का है कि सुधि पाठकगण संकेत किये गये लक्ष्य तक पहुँचने की चेष्टा अवश्य करेंगे।

आशा यह भी है कि यह प्रयास संस्थान परिवार के सदस्यों की सृजनात्मक प्रतिभा को प्रोत्साहन देगा और उनके द्वारा राजभाषा में अभिव्यक्ति को सशक्त करने का माध्यम भी बनेगा। बूँद–बूँद से सागर बनता है, एक प्रज्वलित दीपक घनघोर तिमिर को भी परास्त करने की सामर्थ्य रखता है, इसी तरह एक विचार भी जीवन की दिशा और सोच के दायरे को बदलने की क्षमता रखता है। इस पत्रिका के किसी एक वाक्य या विचार से यदि एक पाठक की भी विचार–शक्ति को उत्प्रेरण प्राप्त हुआ, तो निश्चित ही हमें प्रोत्साहन मिलेगा। हमारे वनों का वैभव बढ़े, वन्यप्राणी सुरक्षित व निष्कंटक होकर अनन्त काल तक प्रकृति की गोद में अपना जीवन व्यतीत कर सृष्टि को पूर्णता प्रदान करते रहें, इसी में सर्वजन हिताय सम्बद्ध है और प्रकषति की प्रसन्नता भी।

पाठकगण अपनी प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करके हमें और बेहतर करने को प्रेरित करेंगे, इसी कामना के साथ "वन–वैभव" प्रस्तुत है।

– सम्पादक मण्डल

उद्देश्य व निर्धारित लक्ष्य

* वन्यजीव विज्ञान में मानव संसाधनों का विकास करना तथा क्षमता बढ़ाना।
* वन्यजीव विज्ञान में सर्वोत्कृष्ट केन्द्र विकसित करना।
* वन्यजीव संरक्षण के लिए परामर्शी व सलाहकरिता सेवायें प्रदान करना।
* वन्यजीव विज्ञान तथा संरक्षण सम्बन्धी विषयों की हिमायत करना।
* वन्यजीव संरक्षण में प्रशिक्षण तथा अनुसंधान के लिए दक्षिण एशिया तथा दक्षिण–पूर्वी एशिया के लिए क्षेत्रीय केन्द्र विकसित करना।
* वन्यजीव विज्ञान के क्षेत्र में मानद् विश्वविद्यालय के रूप में विकास करना।

हमारा ध्येय

भारतीय वन्यजीव संस्थान का ध्येय वन्यजीव विज्ञान के विकास का पोषण करना तथा कार्य क्षेत्र में उसके अनुप्रयोग को इस तरह से प्रोन्नत करना है, जो हमारे आर्थिक–सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश के अनुरूप हो।

अनुक्रमणिका

♦ पश्चिमी हिमालय में फैजेण्ट्स के वितरण अनुमान, बहुलता और निगरानी हेतु तकनीक? — 1
डा0 एस0 सत्यकुमार

♦ पर्यावरण की हिमायत — 3
नवीन चन्द्र काण्डपाल

♦ उत्तराखंड के वन्य जीवों तथा उनके वास स्थलों का संक्षिप्त परिचय — 4
ए. एस. नेगी

♦ भारत मे हेरियर्सः परिचय एवं पहचान – एक पहचान पुस्तिका — 8
अशोक वर्मा

♦ हिमालयी क्षेत्र की अनुपम विरासत, कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य, हिमाचल प्रदेश — 12
श्री विवेक जोशी

♦ भारत में बाघ परियोजनायें एवं संरक्षण — 14
जगदीश प्रसाद सती

♦ मण्डल घाटी : जैव विविधता — 19
गजेन्द्र सिंह गज्जू

♦ गेरीघाटी के दुर्लभ व विलुप्त होते ऑर्किड — 21
डा0 जीवन सिंह जलाल

♦ भारतीय वन्यजीव संस्थान की पृष्ठभूमि एवं वर्ष के दौरान गतिविधियाँ — 23
बितापी सी. सिन्हा एवं के0 के0 श्रीवास्तव

♦ वन्यजीव विज्ञान में परास्नातक पाठ्यकम — 27
डा0 जी0 एस0 रावत

♦ भारतीय वन्यजीव संस्थान का पुस्तकालय एवं प्रलेखन केन्द्र — 30
यशपाल सिंह वर्मा

♦ संस्थान में श्रृव्य–दृभय एकक् का योगदान — 32
सैमुएल विल्सन

- वन संरक्षण और उसकी आवश्यकता — 34
  यशपाल सिंह वर्मा
- शारीरिक आरोग्यता एवं योग साधना–शास्त्रोक दृष्टि — 35
  हीरा बल्लभ जोशी, एवं बाबूराम शर्मा
- वृक्ष — 36
  भुवनचन्द्र उपाध्याय
- वन्य जीवों के हमारा सम्बन्ध एवं सुरक्षा के उपाय — 37
  भुवनचन्द्र उपाध्याय
- अपने उत्तराखण्ड को पहचानें — 40
  नवीन चन्द्र काण्ड़पाल
- पीपल का पेड़ — 41
  प्यारचन्द सिंह असवाल
- पर्यावरण की सुरक्षा — 42
  धर्म सिंह उर्फ पप्पू कुमार
- जंगल की व्यथा — 44
  श्री अनील कुमार सिंह
- राष्ट्र की समस्या — 44
  भुवनचन्द्र उपाध्याय
- बदलता पिरवेश — 45
  प्रधुम्न प्रसाद सिंह
- पर्यावरण संदेश — 45
  नवीन चन्द्र काण्ड़पाल
- क्या बाघ आदिवासी एवं जंगलों का सह अस्तित्व संभव है ? (हिन्दी वाद–विवाद प्रतियोगिता – उद्‌बोधन के अंश) — 46
  ए.के. दुबे
- संस्थान में आयोजित हिन्दी गतिविधियां — 49
  श्रीमती बलजीत कौर

पश्चिमी हिमालय मे फेजैण्ट्स के वितरण अनुमान, बहुलता और निगरानी हेतु तकनीकें

डा0 एस0 सत्यकुमार
भा.व.सं., देहरादून

फेजैण्ट्स बड़े आकार वाले, चमकीले, रंगयुक्त, जमीन पर विचरण करने वाले वे पक्षी होते हैं, जो वन्यजीव विविधता का एक महत्वपूर्ण घटक हैं। ये वास गुणवत्ता के अच्छे सूचक हैं और कुछ स्तनधारी एवं शिकारी पक्षियों के शिकार होते हैं। फेजैण्ट्स उनकी पारिस्थितिकीय, समाजो–सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सौंदर्य बोध आदि मूल्यों के कारण मानव द्वारा भली–भांति पहचाने जाते हैं।

उत्तराखण्ड में फेजैण्ट्स की सात प्रजातियां पाई जाती हैं, वे हैं – हिमालयन मोनाल (*म्युनल*) (*लोकोफोरस इम्पीजेनस*), स्टर (*ट्रैगोपन मेलानोसिफेलस*), चीर फेजैण्ट (*चीर*) (कैट्रियस वेलिशी) कोकलाज़ फेजैण्ट (*कुक्रोला*) (*प्युक्रेसिया मैक्रेलोका*), कलीज़ फेजैण्ट (*कलीज,* काला मुर्गा) (*लोफुरा ल्युकोमेलानोज*), रैड जंगलफाउल (जंगली मुर्गी, लाल मुर्गी) (*गैलस गैलस*), एवं द इण्डियन पीफाउल (मोर), (*पैवो क्रिस्टेटस*)।

उत्तराखण्ड में फेजैण्ट्स विभिन्न प्रकार के वासस्थलों में काफी बड़े क्षेत्र में पाये जाते हैं। ये राज्य के दक्षिण के समतल क्षेत्र से लेकर उत्तर एवं उत्तर के ऊंचे एवं ठण्डे क्षेत्रों तक पाये जाते हैं। अधिकतर फेजैण्ट्स संकटग्रस्त या लुप्तप्राय होने की स्थिति में हैं क्योंकि इनके मांस एवं पंखों आदि के लिए इनका शिकार होता है इनके वासस्थलों को नुकसान पहुंचाया जाता है। इस राज्य के लिए इन पक्षियों का दीर्घावधि संरक्षण एवं प्रबंधन करना उच्च प्राथमिकता है। किसी भी वन्यजीव प्रजाति का संरक्षण एवं प्रबन्धन करने के लिए इनके वितरण, आबादी, वास उपयोग एवं व्यवहार पर मूलभूत सूचनायें विशेष महत्वपूर्ण होती हैं।

हिमालय क्षेत्र में फेजैण्ट्स का वितरण अनुमान, बहुलता एवं निगरानी निम्नलिखित कारणों से कठिन होती है : (1) कुछ फेजैण्ट्स बहुत घने, दुर्गम और अधिक ऊंचाई वाले दूरस्थ स्थानों में वास करते हैं, (2) अधिकांश फेजैण्ट्स बहुत शर्मीले होते हैं और घने भू–आच्छादन के कारण और उनके व्यवहार के कारण उन्हें आसानी से नहीं देखा जा सकता, (3) ये सभी फेजैण्ट्स बहुत अधिक स्थानों पर नहीं पाये जाते, अपनी समुदाययुक्त वास प्राथमिकता होने के कारण ये मौसम के अनुसार अपना वास बदलते रहते हैं, एवं (4) इनमें से कुछ तो प्रकृति में बहुत कम घनत्व में मिलते हैं।

पश्चिमी हिमालय में फेजैण्ट्स के वितरण अनुमान, बहुलता एवं निगरानी हेतु निम्नलिखित विधियां प्रस्तावित की जाती हैं।

(अ) उपस्थिति / अनुपस्थिति ज्ञात करना: किसी भी संरक्षित क्षेत्र के वन क्षेत्र में वनखण्डों या बीट्स हेतु फेजैण्ट प्रजाति की उपस्थिति पर

सूचनाओं को दर्ज किया जाता है।

कम्पार्टमेंट आधारित मानचित्रों की अनुपलब्धता की स्थिति में प्राकृतिक लक्षण/विशेषताएँ और उपस्थिति/अनुपस्थिति पर दर्ज सूचनाओं पर आधारित छोटी यूनिटों या ग्रिड्स में बाँटा जा सकता है। फेजैण्ट्स का विवरण जैसे नाम एवं उसकी एकदम सही स्थिति, जहां वह पाया जाता है, इन पर दर्ज की जा रही सूचनाओं का रखरखाव किया जाना चाहिए। जी.पी.एस. स्थिति, ऊँचाई वाले क्षेत्र एवम् सामान्य वन प्रकार को भी दर्ज किया जाना चाहिए।

फेजैण्ट प्रजाति की उपस्थिति प्रत्यक्ष देखे जाने पर आधारित हो सकती है या अन्य प्रमाण, जैसे पंख मिलने की या आवाज सुनने आदि एवं स्थानीय व्यक्तियों के साक्षात्कार, विभागीय रिकार्ड एवं प्रकाशित सूचनाओं पर आधारित विश्वसनीय द्वितीयक सूचना भी हो सकती है। प्रत्येक कम्पार्टमेंट या ग्रिड में प्रत्येक प्रजाति की स्थिति का निर्धारण एवं दर्ज़ किया जाना चाहिए। (उदाहरण के लिए दुर्लभ, सामान्य, बहुतायत)। स्थिति का निर्धारण, क्षेत्र सर्वेक्षणों पर आधारित हो सकता है या विश्वसनीय द्वितीयक सूचनाओं (स्थानीय ग्रामीणों से) पर भी आधारित हो सकता है। प्रत्येक प्रजाति की स्थिति के गुणवत्तापूर्ण निर्धारण को परिभाषित करना भी महत्वपूर्ण है।

(ब) मिलने की दर

मिलने की दर (ई.आर.) बहुलता अनुमान हेतु एक साधारण सूचकांक है, जो संख्या प्रति

हिमाचल प्रदेश में फेजैण्ट्स हेतु विधियों की उपयुक्तता

प्रजाति	उपस्थिति/अनुपस्थिति ब्यौरा	मिलने की दर (ई.आर.)	आवाज गणना
हिमालयन मोनाल	✓	**	X
स्टर ट्रैगोपन	✓	*	**
चीर फेजैण्ट	✓	*	**
कोकलाज़ फेजैण्ट	✓	*	**
कलीज़ फेजैण्ट	✓	**	X
रैड जंगल फाउल	✓	**	X
इण्डियन पीफाउल	✓	**	X

एकक् प्रयास से अभिव्यक्त किया जाता है। यह एकक् प्रयास किसी क्षेत्र में पक्षियों की गहन रूप से खोज के लिए लगाया गया समय हो सकता है या किसी क्षेत्र में पक्षियों की गहन रूप से खोज के दौरान तय की गई दूरी हो सकती है। देखी गई संख्या प्रत्यक्ष–प्रमाणों पर आधारित हो सकती है या अप्रत्यक्ष प्रमाणों जैसे आवाजें, मल–त्याग और भोजन के लिए खोदने से बने निशान जैसे अन्य संकेत आदि।

मौजूद सड़कों, रास्तों, गलियों, टीलों, नालों आदि से वाहन के माध्यम से या कम्पास या जी.पी.एस. का उपयोग करते हुए पूर्व निर्धारित क्षेत्र के भ्रमण द्वारा क्षेत्र के फेजैण्ट्स का सर्वेक्षण किया जा सकता है। अप्रत्यक्ष प्रमाण जैसे उनकी आवाजें और मल आदि को भी उपयोग में लिया जा सकता है, किन्तु इनका उपयोग करते समय आवाज और मल की पहचान में बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। विभिन्न क्षेत्रों में एक ही प्रजाति के दो एक समान वासों की मिलने की दर की तुलना की जा सकती है। औसत मिलने की दर एवं मानक

त्रुटि की गणना हेतु प्रत्येक माह या मौसम में भ्रमण की पर्याप्त संख्या होना आवश्यक है। यह तकनीक सभी फेजैण्ट्स के लिए लागू होती है।

(स) आवाज (पुकार) गणना

कुछ फेजैण्ट्स का प्रजनन मौसम (अप्रैल–मई) के दौरान विशिष्ट आवाज (पुकार) व्यवहार होता है, इनकी बहुलता का अनुमान आवाज गणना तकनीक से लगाया जाता है। प्रजनन मौसम के दौरान, नर फेजैण्ट पौ फटने (भोर) के पहले के समय में मादाओं को पुकारते हैं और साथ ही आसपास के प्रतिद्वन्दी नरों को भी चुनौती देते हैं। इस विधि में, भोर होने के पहले ही फेजैण्ट्स के वास में आवाज गणना हेतु एक या दो निरीक्षणकर्ता एक सीधी लाइन में एक दूसरे से कम से कम 500 मी. की दूरी पर तैनात किये जाते हैं। यह एक क्षेत्र में पुकारने वाले नरों की संख्या का सूचकांक है। आदर्श स्थिति में, प्रत्येक पुकारने वाले नर के पास एक मादा होगी। किन्तु कुछ मामलों में, आवाज देने वाले नर के पास मादा नहीं होगी या पुकारने वाले नर के पास एक मादा के अतिरिक्त एक अन्य अवयस्क भी होगा। कोई आवाज नहीं आने का अर्थ किसी पक्षी का न होना, कतई नहीं है। कई बार फेजैण्ट्स उस क्षेत्र में अपने साथी से प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए भी आवाज लगाते हैं। आवाज गणना विधि किसी क्षेत्र में वर्षों से आवाज लगाने वाले नरों की निगरानी के लिए अच्छी विधि है। यह विधि ट्रैगोपन, कोकलाज़ एवं चीर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

कृपया नोट करें – मात्र एक ट्रांसेक्ट पर चलना या एक बार आवाज गणना करने से किसी क्षेत्र में फेजैण्ट की बहुतायत को समझने में पर्याप्त मदद् नहीं मिलेगी। यही सबसे अच्छी बात होगी कि किसी क्षेत्र में कुछ चयनित ट्रांसेक्ट, पगडण्डी एवं संकरे रास्तों (स्थायी रूप से चिन्हित) का चयन किया जाये एवं प्रत्येक मौसम में कुछ बार उन पर चला जाये, प्रक्रिया को दुहराया जाये। आवाज गणना विधि हेतु कुछ स्थलों को स्थायी रूप से चिन्हित किया जा सकता है और प्रत्येक वर्ष अप्रैल/मई के दौरान आवाज गणना की जाये।

पर्यावरण की हिमायत

कत्ल होते हुए पेड़ो को बचाने निकले, लोग पर्यावरण की हिमायत के बहाने निकले।
अस्त्र–शस्त्रों के लिए सबसे सुरक्षित स्थान, बीच बस्ती में शरीफों के ठिकाने निकले।

दुश्मनों ने भी बनाया है हमें निशाना अक्सर, हम ही मित्रों की कलम के निशाने निकले।
दिन में सूरज की तपन से बचाया सिर को, चाँदनी रात में छतरियाँ ताने निकले।। कत्ल......

आप सोए हुए लोगों को जगाते है मगर, हम तो जागे हुए सोयों को जगाने निकले।
हमारी बातों पे किसी ने न कभी ध्यान दिया, इनकी बातों में हमेशा बड़े पैमाने निकले। कत्ल....

नवीन चन्द्र काण्डपाल, भा.व.सं., देहरादून

उत्तराखण्ड के वन्यजीवों तथा उनके वासस्थलों का संक्षिप्त परिचय

ए.एस. नेगी
मुख्य वन्यजीव प्रतिपालक (सेवानिवृत्त), उत्तराखंड

उत्तराखण्ड राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 64.8% भाग वनों के अन्तर्गत् है। लगभग 44% भाग में वनावरण मौजूद है। तराई के मैदानी भाग से लेकर हिमाच्छादित उच्च पर्वत श्रंखलाओं तक फैले इन वनों की भौगोलिक विषमता व जलवायु की भिन्नता के कारण इसमें विभिन्न प्रकार के वन पाये जाते हैं। तराई–भाभर के साल बाहुल्य वनों, मिश्रित प्रजाति के वनों, सब–मोन्टेन घास के मैदानों, चीड़ व बांज के अत्यधिक जैविक दबाव से ग्रसित वनों, उच्च देवदार व कैल तथा फर–स्प्रूश के शंकुधारी वनों से मोरू, खरसू, बुरांस, मैपल तथा भोजपत्र के मिश्रित व एकाकी वनों तक इनका विस्तार है। वृक्ष रेखा के ऊपर बुग्याल, रोरेन व ग्लेशियर बहुतायत में हैं। लगभग 54 बुग्यालों में वैदनी, रामणी, सरसोंपालत आदि प्रसिद्ध बुग्याल हैं। फूलों की घाटी, हर की दून आदि विश्व प्रसिद्ध ऊँचाई वाली घाटियां हैं।

उत्तराखण्ड के विभिन्न प्रकार के वनों व घास के मैदानों में विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षी व जीव–जन्तु पाए जाते हैं। जहाँ तराई–भाभर में बाघ व हाथी जैसे दुर्लभ व आकर्षक पशु हैं, वहीं चीड़ व बांज के वनों में गुलदार, घुरड़, सेराउ, मार्टिन, स्लॉथ बियर, काला भालू, बन्दर व लंगूर पाए जाते हैं, तो उच्च स्थानों पर हिम बाघ, भूरा भालू, कस्तूरी मृग, हिमालयी थार, भरल, मोनाल आदि दुर्लभ पशु–पक्षी बहुतायत में मौजूद हैं।

संरक्षित क्षेत्रों के अन्तर्गत् आने वाले वास–स्थल

भारतीय उपमहाद्वीप का प्रथम राष्ट्रीय उद्यान, कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान तराई भाभर का विश्व प्रसिद्ध उद्यान है तो राजाजी शिवालिक श्रंखला का राष्ट्रीय उद्यान है। नन्दादेवी महत्वपूर्ण राष्ट्रीय पार्क है, तो फूलों की घाटी को भी विश्व स्तर पर प्रसिद्धि प्राप्त है। विभिन्न प्रकार के वास स्थलों में 6 राष्ट्रीय उद्यान, 6 वन्यजीव अभ्यारण्य तथा 2 संरक्षण आरक्षित क्षेत्र हैं, जिनका क्षेत्रफल क्रमशः 4,921 वर्ग कि.मी. 2,414 वर्ग कि.मी. तथा 41.44 वर्ग कि.मी. है। सभी प्रकार के संरक्षित क्षेत्रों के अन्तर्गत् उत्तराखण्ड का 12.77% भू–भाग है जो राष्ट्रीय औसत 4.6% से लगभग तीन गुना हैं।

तराई भाभर क्षेत्र में 2 राष्ट्रीय उद्यान व 1 वन्यजीव अभ्यारण्य है। 474.22 वर्ग किमी क्षेत्र कार्बेट का बफर क्षेत्र भी वन्यजीव बाहुल्य क्षेत्र है, जिसका नियन्त्रण निदेशक, कार्बेट टाइगर रिज़र्व के द्वारा किया जाता है । इस प्रकार तराई भाभर क्षेत्र में कुल 1684 वर्ग किमी संरक्षित क्षेत्र तथा 474.22 वर्ग किमी विशेष रूप से प्रबन्धित बफर क्षेत्र है। तराई भाभर क्षेत्र में प्रदेश के कुल संरक्षित क्षेत्र का 23% भाग है। चीड़–बांज ज़ोन में केवल मसूरी तथा बिनसर वन्यजीव अभ्यारण्य क्षेत्र हैं, जो कुल संरक्षित क्षेत्र का मात्र 0.87% है। शेष लगभग 76% संरक्षित क्षेत्र उच्च स्थानों पर हैं, जिनमें नन्दादेवी,

फूलों की घाटी, गंगोत्री व गोविन्द राष्ट्रीय उद्यान एवं अस्कोट, गोबिन्द पशु विहार व केदारनाथ वन्यजीव अभ्यारण्य हैं। भारतीय वन्यजीव अधिनियम 1972 के 2003 में किए गये संशोधन के बाद उत्तराखण्ड राज्य को देश के सर्वप्रथम दो संरक्षण आरक्ष (Conservation Reserve) यथा आसन व झिलमिल ताल घोषित करने का श्रेय हैं। उत्तरांचल में जनपदवार संरक्षित क्षेत्रों की स्थिति का विवरण निम्न तालिका में दिया गया है ।

संरक्षित क्षेत्रों के बाहर के वास–स्थल

उत्तराखण्ड में संरक्षित क्षेत्रों के बाहर भी वन्यजीवों के वासस्थल मौजूद हैं। हाथी, जो सबसे बड़ा जीव है, मुक्त विचरण की प्रवृत्ति का होने के कारण जहाँ कहीं सम्भव है, आसपास के आरक्षित वनों में विचरण करता है। गलियारे की समस्या के कारण कई स्थानों पर स्वतन्त्र विचरण में बाधा उत्पन्न हो गई है। कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान का बफर क्षेत्र संरक्षित क्षेत्रों के समान ही वन्यजीवों की संख्या व विविधता की दृष्टि से सर्वथा महत्वपूर्ण है। इसके अलावा लैन्सडोन, देहरादून, हरिद्वार, रामनगर, तराई पश्चिमी, हल्द्वानी, तराई केन्द्रीय, दक्षिणी पिथौरागढ़ प्रभागों तथा नरेन्द्रनगर प्रभाग में भी हाथी पायी जाते हैं। उत्तर प्रदेश के शिवालिक व बिजनौर वन प्रभागों में भी हाथी यदा–कदा चले जाते हैं। शेर भी लगभग उक्त प्रभागों में

क्रम संख्या	जनपद का नाम	भौगोलिक क्षेत्रफल (वर्ग किमी0)	आरक्षित संरक्षित अवर्गीकृत व निहित वन क्षेत्रफल (वर्ग किमी0)	संरक्षित क्षेत्र (राष्ट्रीय, उद्यान, वन्यजीव विहार तथा संरक्षण आरक्ष (वर्ग किमी0)	कालम 4 के सापेक्ष %	प्रदेश के कुल संरक्षित क्षेत्र (राष्ट्रीय, उद्यान वन्यजीव के सापेक्ष न0
1	2	3	4	5	6	7
1	अल्मोड़ा	3139	785.14	20175	2.57	0.27
2	बागेश्वर	2246	690.33	26.895	3.89	0.36
3	पिथौरागढ़	7090	751.37	599.930	79.87	8.13
4	चम्पावत	1766	734.21	–	–	–
5	नैनीताल	4251	2575.45	165.760	6.44	2.25
6	ऊधमसिंह नगर	2542	937.37	–	–	–
7	गढ़वाल	5329	2327.07	906.320	38.95	12.28
8	रूद्रप्रयाग	1984	1273.08	724.760	56.93	9.82
9	चमोली	8030	2727.05	967.980	35.49	13.13
10	टिहरी	3642	2320.05	–	–	–
11	उत्तरकाशी	8016	6954.89	3343.100	48.07	45.32
12	देहरादून	3088	1522.71	252.040	16.55	3.42
13	हरिद्वार	2360	724.31	370.560	51.16	5.02
	योग	53483	24323.03	7377.52	30.33	100.00

ही पाया जाता है। केवल नरेन्द्रनगर वन प्रभाग में पिछले कुछ वर्षों से शेर की उपस्थिति दर्ज नहीं हो रही हैं। हाथी व शेर की कुल संख्या की लगभग एक तिहाई संख्या संरक्षित क्षेत्रों के बाहर पाई जाती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में गुलदार, संरक्षित क्षेत्रों के बाहर सर्वाधिक पाया जाता हैं। गुलदार वनों के अलावा आबादी के आसपास भी वास करता है। जहाँ कहीं छिपने का स्थान उपलब्ध हो, वहाँ गुलदार आसानी से रह सकता है। इसीलिए पालतू पशुओं व मनुष्यों पर आक्रमण की घटनायें भी अधिक होती हैं। आरक्षित वनों में चीड़ व बांज ज़ोन में घुरड़, काकड़, सेराव, जंगली सुअर, सेही, मार्टिन, सिवेट, विभिन्न प्रकार के बिल्ली प्रजाति के जीव, सियार, बन्दर, लंगूर, स्लोथ व काला भालू पाए जाते हैं। चीड़ व बांज जंगलों में आबादी का दबाव अत्यधिक होने के कारण वन्यजीवों की संख्या घटती जा रही है। इसी क्षेत्र में सर्वाधिक अवैध शिकार भी होता है, अधिक ऊँचाई के जो वन क्षेत्र संरक्षित क्षेत्रों के बाहर हैं, उनमें भी लगभग वे सभी जीव पाए जाते हैं, जो संरक्षित क्षेत्रों में पाए जाते हैं। केवल संख्या में अन्तर हो सकता है। इन क्षेत्रों में भौगोलिक व जलवायु की विपरीत परिस्थितियों के कारण विभागीय कर्मचारी प्रभावी नहीं हो पाते हैं और उनकी संख्या अत्यधिक कम है। अतः अवैध आखेट की सम्भावनायें अधिक हैं। गुलदार, हिम तेंदुए, कस्तूरी मृग, हिमालयी थार, काला व भूरा भालू इससे अधिक प्रभावित होते हैं।

संरक्षित क्षेत्रों के बाहर कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जो वन्यजीवों की विविधता की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इनके संरक्षण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है तथा इन क्षेत्रों से

वन प्रभाग	मिनिकोर हेतु उपयुक्त क्षेत्र
हरिद्वार	चिड़ियापुर व श्यामपुर रेंज
देहरादून	आसारोडी रेंज
नरेन्द्रनगर	शिवपुर रेंज
लैन्सडौन	कोटरी व लालढांग रेंज
रामनगर	कोटा रेंज (सीताबनी क्षेत्र)
हल्द्वानी	नन्धौर रेंज
दक्षिणी पिथोरागढ़	बूम तथा दुगाडी रेंज

सम्बन्धित कार्ययोजनाओं का पुनरीक्षण करते समय इन्हें संरक्षित करने हेतु उपचार प्रस्तावित किए जाने चाहिए।

संरक्षित क्षेत्रों के बाहर वन्यजीव संरक्षण के उपाय किये जाने आवश्यक हैं। इन क्षेत्रों में जो वन्यजीव क्षेत्र बनाए गए थे, उनके समाप्त करने से अत्यधिक हानि हुई है, अतः उन्हें पूर्ववत् पुनर्स्थापित किया जाना आवश्यक है।

उत्तराखण्ड की जैव–विविधता

उत्तराखण्ड में तराई से उच्च हिमालय क्षेत्र तक फैले भौगोलिक क्षेत्र विभिन्न प्रकार की जलवायु, मिट्टी व वनों की उपस्थिति के कारण जैव–विविधता में अत्यन्त समृद्ध हैं। भारत में पाए जाने वाले 9 बायोज्योग्राफिक ज़ोन में से उत्तराखण्ड में ट्रांस–हिमालय, हिमालय तथा गेंजेटिक मिलाकर कुल तीन ज़ोन मौजूद हैं। भारत विश्व में मौजूद कुल 7 बायोज्योग्राफिक के तिराहे पर स्थित होने के कारण जैवविविधता का भण्डार है। भारत में 46,286 पेड़–पौधों की प्रजातियों तथा 77,548 जीव जन्तुओं की प्रजातियाँ मौजूद हैं। इसके अन्तर्गत् 17000 फूलने वाले पेड़–पौधे, 57525 कीड़े–मकोड़े,2,446 मछली प्रजातियाँ, 210 एम्फीबियन, 496 सरीसृप, 1,228 पक्षी प्रजातियाँ व 398 स्तनधारी पशुओं की प्रजातियाँ हैं।

उत्तराखण्ड की जैवविविधता का अनुमान इसमें स्थित दो प्रतिनिधि क्षेत्रों की जैव विविधता से लगाया जा सकता है। तराई–भाभर क्षेत्र में हिमालय व शिवालिक पहाड़ियों की तलहटी में स्थित कार्बेट टाइगर रिज़र्व एवं उच्च हिमालय क्षेत्र में स्थित नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान । इन क्षेत्रों में सघन शोध व सर्वेक्षण कार्य किए गए हैं, जिनके आधार पर इनमें निम्न जैव विविधता का अनुमान है।

कार्बेट टाइगर रिज़र्व

पौध प्रजातियाँ (फ्लोरा)

उच्च पौधों की प्रजातियाँ	:	266
छोटे पौधे (हर्ब)	:	222
एक्वेटिक व मार्श हर्ब	:	25
घास प्रजातियाँ	:	42
सेजेज़	:	25
वूडी क्लाइम्बर्स	:	22
हर्बेशियस व वूडी क्लाम्बर्स	:	25
इपिफाइट्स	:	8
ब्रायोफाट्स	:	20
मौस	:	8
लाइकेन	:	20
योग	:	683

जैव प्रजातियाँ (फौना)

स्तनपाई	:	55
पक्षी	:	526
रेप्टाइल्स व एम्फीबियन	:	33
मछली	:	29

नन्दादेवी बायोस्फियर रिज़र्व

पौध प्रजातियाँ (फ्लोरा)

लगभग 1000 जिसमें फुंगी, लाइकेन, ब्रायोफाइट्स व टेरिडोफाइट्स सम्मिलित हैं।

जैव प्रजातियाँ (फौना)

स्तनपायी	:	29
पक्षी	:	229
रेप्टाइल्स, एम्फीबियन व मछली	:	12
आर्थोपोड्स,	:	230
मोलस्कस	:	23
अनलिड्स	:	6

दोनों क्षेत्रों मे पाई जाने वाली पौध व जीव प्रजातियाँ लगभग भिन्न होंगी, अतः इन दोनों क्षेत्रों की प्रजातियों को जोड़कर उत्तराखण्ड में पाई जाने वाली प्रजातियों का मोटा अनुमान लगाया जा सकता है। पक्षी प्रजातियों में भारत में पाई जाने वाली कुल पक्षी प्रजातियों की आधे से अधिक उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं। स्तनपाई लगभग 25% है।

इस प्रकार उत्तराखण्ड की वन सम्पदा, वन्य जीव–जन्तु तथा प्राकृतिक छटा अद्वितीय है। उत्तराखण्ड में अनुसंधान अध्ययन, प्रकृति पर्यटन आदि की अपार सम्भावनायें हैं। पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में नन्दा देवी बायोस्फियर रिजर्व की स्थापना वर्ष 1988 में आई.यू.सी.एन. के मैन एण्ड बायोस्फियर कार्यक्रम के अन्तर्गत् इसी उद्देश्य से की गई कि हिमालय क्षेत्र में मानव की गतिविधियों के बावजूद जैवविविधता को कैसे अक्षुण्ण रखा जा सकता है । नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान को 'वर्ल्ड हैरिटेज साइट' की सूची में सम्मिलित किया गया है, जो नन्दा देवी बायोस्फियर रिजर्व का कोर ज़ोन भी है।

हाल ही में इस बायोस्फियर रिजर्व में फूलों की घाटी तथा अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों को भी जोड़ दिया गया है। फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान को भी "वर्ल्ड हैरिटेज साइट" बनाने हेतु प्रयास किया जा रहा है, राज्य की जैवविविधता को जन सहयोग से अक्षुण्ण बनाए रखना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भारत में हैरियर्स : परिचय एवं पहचान–एक पहचान पुस्तिका

अशोक वर्मा
भा.व.सं., देहरादून

हैरियर्स उन दिनचर शिकारी पक्षियों का समूह है, जो ज़मीन पर घोंसला बनाते हैं और वहीं सोते हैं। उनकी अन्य विशेषताओं में, उनके प्रजनन काल के दौरान मादा को भोजन का आदान–प्रदान, भोजन की तलाश में लम्बी दूरी तय करना, अति तीक्ष्ण श्रवण शक्ति एवं एक से अधिक मादा से प्रजनन करना। इनकी एक महत्वपूर्ण विशेषता है इनका अपने अप्रजनन क्षेत्र में सामुदायिक शयन करना, जहाँ ये हजारों की संख्या तक शामिल होते हैं।

भारत में सबसे अधिक संख्या में हैरियर्स अप्रजनन काल में आते हैं। संसार में इनकी 16 प्रजातियों में से भारत में 6 प्रजातियाँ पायी जाती हैं, जो शीतकालीन प्रवासी हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं:

मान्टेगूस हैरियर सर्कस पायर्गगस, पैलिड हैरियर स. मैक्रुरस्, हैन हैरियरर्स सायनियस्, यूरेशियन मार्श हैरियर स. एरुजिनोसस्, पाईड हैरियर स. मैलेनोल्यूकस और *ईस्टर्न मार्श हैरियर स. स्पिलोनोटस्।*

हैरियर्स, अन्टार्कटिक महाद्वीप को छोड़कर अन्यत्र सभी महाद्वीपो में पाये जाते हैं। शीतकाल में ये पक्षी भारत में सभी स्थानों पर देखे जा सकते हैं। ये प्रवासी पक्षी जुलाई के अन्त से लेकर अप्रैल माह तक भारत में वास करते हैं। हालाँकि इनका अपने प्रजनन स्थानों की ओर पुनर्गमन फरवरी माह से ही आरम्भ हो जाता है। वैसे तो इनके उद्गम के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं है, किन्तु एक हैरियर, जिसे केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, भरतपुर, राजस्थान में 25 मार्च 1962 को छल्ला पहचान चिन्ह पहनाया गया था, उसके बारे में लगभग तीन साल बाद 7 मई 1965 में सोवियत संघ गणराज्य के कजाकिस्तान में प्रमाण मिले, जिससे यह पता चलता है कि भारत में प्रवास करने वाले ये पक्षी मध्य एशियाई देशों से आते होंगे।

सामुदायिक भायनस्थल

हैरियर्स अपने दिन के क्रियाकलापों के उपरान्त सूर्यास्त से लगभग 1 से 2 घंटे पूर्व उन स्थलों पर एकत्रित होना आरम्भ कर देते हैं, जहाँ ये अपनी रात्रि व्यतीत करते हैं। इनके ये वासस्थल मानव आवासों से बहुत दूर मुख्यतया ऊँचे घास के मैदान होते हैं, जहाँ ये अपने आपको पूर्णतया आवरित कर लेते हैं ताकि कड़ाके की सर्दी से तथा परभक्षियों जैसे जंगली बिल्ली, सियार, नेवले आदि से बचाव हो सके। ये स्थल इनकी जीवनरक्षा के लिए अति महत्वपूर्ण स्थान हैं। भारत में इन्हें खोजने का अभियान 1996 से 2006 तक चलाया गया। कुल 10 स्थल भारत में पाये गये, उदाहरणतः केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, राजस्थान में लगभग 3000 पक्षी, रोलापाडू वन्यजीव अभ्यारण्य, आन्ध्र प्रदेश में लगभग 800, इक्रीसेट, आन्ध्र प्रदेश में लगभग 300,

अकोला, महाराष्ट्र में लगभग 250, हैसारघट्टा, कर्नाटक में लगभग 150, तालछापर वन्यजीव अभ्यारण्य, राजस्थान में लगभग 100, मुम्बई, महाराष्ट्र में लगभग 50, व सोर्सन, राजस्थान में लगभग 20 पक्षी।

पहचान

हैरियर लम्बे पैर, लम्बी पूँछ, लम्बे पंखों वाला दिनचर शिकारी है, जिसकी मुखाकृति उल्लू जैसी एवं आकार चील ब्लैक काइट के बराबर होता है। इनमें नर एवं मादा के आकार एवं रंग में बहुत अंतर पाया जाता है। मादायें एवं अवयस्क पक्षी अधिकांशतः भूरे तथा नर सामान्यतः स्लेटी रंग के होते हैं। नरों के पंखों के छोर काले होते हैं। उड़ते हुए हैरियर को पहचानना बहुत सरल है, ये उड़ते समय अपने पंखों को अपने शरीर के उपर v आकृति में रखते हैं और भूमि के काफी करीब उड़ान भरते हैं। कुछ अन्य शिकारी पक्षी जैसे बजर्ड, बाज, एवं गिद्ध भी उड़ते समय अपने पंखों को इसी आकृति में रखते हैं, किन्तु इनकी पूँछ हैरियर की तुलना में फैली हुई और बहुत छोटी होती हैं। जहाँ इनको अन्य शिकारी पक्षियों की तुलना में पहचानना सरल है। वहीं इनकी प्रजातियों में इन्हें एक दूसरे से भिन्न करना व मादा एवं अवयस्क पक्षियों को अलग करना काफी कठिन कार्य है। परन्तु धैर्य एवं पर्याप्त समय इनके अध्ययन में लगाया जाये तो इन्हें भी सरलता से पहचाना जा सकता है। निम्न बातों का ध्यान रखने पर इन्हें पहचानने में काफी मदद मिलेगीः 1. पंखों के नीचे भीतर की ओर का पैटर्न (प्रारूप), 2. मुखाकृति एवं उसका प्रारूप, 3. पक्षी की कांख में उपस्थित पैटर्न, 4. शरीर में उपस्थित धारियों का पैटर्न, 5. पूँछ के लक्षण (जैसे लम्बी, गोल), 6.शरीर एवं पूँछ का अनुपात, 7. उड़ान का पैटर्न।

मॉन्टेगूस, पैलिड एवं हैन हैरियर को 'रिंगटेल' भी कहते हैं, क्योंकि इनके अवयस्क एवं मादाओं की पूँछ में धारियाँ (रिंग) पायी जाती है।

मॉन्टेगूस हैरियर

इनके पंख अन्य हैरियर्स की तुलना में नुकीले होते हैं। नर का रंग गाढ़ा स्लेटी होता है, पंखों के छोर काले एवं दोनो पंखों पर लम्बी काली धारियाँ होती हैं, जो उड़ते समय इन्हें पहचानने में मदद करती हैं। मादायें एवं अवयस्क भूरे रंग की होती हैं तथा पूँछ में काली धारियाँ होती हैं और गर्दन के चारों ओर हल्की सफेद कॉलर होती है, आँखों के चारों ओर का रंग सफेद होता है, जो अन्य हैरियर्स की तुलना में काफी अधिक होता है। मादा एवं अवयस्क वैसे तो काफी मिलते–जुलते होते हैं, किन्तु मादा में सामने वाले हिस्से पर धारियाँ होती हैं, जबकि अवयस्कों में नहीं होती तथा इनका रंग गहरा नारंगी होता है। वयस्क मादाएं यद्यपि हैन हैरियर की मादा से काफी मिलती जुलती हैं लेकिन आँख के नीचे इनमें काला रंग अधिक पाया जाता है।

पैलिड हैरियर

इनमें नर प्रायः उजले स्लेटी रंग के होते हैं, जो मॉन्टेगूस एवं हैन हैरियर्स के नर की तुलना में छोटे एवं काफी फुर्तीले होते हैं तथा इनके पंखों के सिर पर काले पंखों का हिस्सा काफी कम दिखता है। पैलिड हैरियर की मादा एवं अवयस्क भूरे रंग के होते हैं, जिनके पंख पर काली धारियाँ होती हैं एवं गर्दन के चारों ओर सफेद

कॉलर अन्य रिंगटेल हैरियर की मादा एवं अवयस्कों की तुलना में काफी अधिक एवं स्पष्ट होता है। यदि इनके पंखों को उड़ते समय देखा जाये तो सफेद धारी जो मॉन्टेगूज हैरियर में काफी स्पष्ट, चौड़ी एवं शरीर को छूती हुई पंखों में फैली हुई होती है, जो कि पैलिड हैरियर में शरीर को छूती हुई नहीं होती है। इनके अवयस्क मॉन्टेगूज़ हैरियर से काफ़ी मिलते–जुलते हैं, अन्तर केवल इनके रंग से ही किया जाता है।

हैन हैरियर

नर स्लेटी रंग के होते हैं, जिनके पंख के सिरों का काफी हिस्सा काला होता है एवं पूँछ के ऊपर स्पष्ट रूप से सफेद चिह्न (रम्प) दिखाई देता है। हैन हैरियर आकार में यूरेशियन मार्श हैरियर के बाद आते हैं एवं अन्य हैरियर के नरों की तुलना में काफी बड़े होते हैं। अवयस्क एवं मादा भूरे रंग के होते हैं, पूँछ पर काली एवं शरीर के अग्रभाग पर धारियाँ होती हैं, इनके पंखों के अग्र सिरे अन्य हैरियर की तुलना में चौड़े एवं खुले हुए होते हैं।

यूरेशियन मार्श हैरियर

यह आकार में अपनी सभी प्रजातियों में सबसे बड़ा होता है। नर में तीन रंग होते हैं: शरीर, अग्रपंख–भूरे, पंख के सिरे–काले तथा पूँछ एवं पंख का मध्य भाग–सलेटी। इनके अवस्यक एवं मादा चॉकलेटी भूरे रंग के होते हैं, जिनके सिर मटमैले सफेद रंग के होते हैं, जिन पर धारियाँ उपस्थित होती है। मादा के कंधों एवं वक्ष पर सफेद रंग काफी स्पष्ट दिखाई देता है, जो इन्हें उड़ते समय पहचानने में मदद करता है। अवयस्क मादा की तुलना में अधिक गहरे भूरे रंग के होते हैं, जो आकार में इनसे छोटे भी होते हैं, जिनके सिर पर सफेद रंग दिखाई भी देता है। पूर्ण भूरे अवयस्क भी भारत में मिलते हैं, परन्तु भारत में इनकी संख्या काफी कम होती है। अवयस्क को उड़ते हुए पहचानने के लिए उनके पंख पर उपस्थित सफेद चन्द्राकार चिह्न को देखना चाहिए।

पाईड हैरियर

नर चमकीले काले एवं दूधिया सफेद होते हैं तथा पूँछ स्लेटी होती है। सिर, गर्दन, वक्ष पूरी तरह से काले होते हैं तथा पंखों के मध्य काली मोटी धारी होती है। उड़ते हुए पक्षी को नीचे से देखने पर अन्दर का भाग उजला सफेद दिखाई देता है। मादा व अवयस्क भूरे रंग के होते हैं तथा इनकी पूँछ के ऊपर सफेद रंग होता है एवं पूँछ पर काली धारियाँ होती हैं। मादा में पंखों का ऊपरी मध्य भाग स्लेटी होता है, जिन पर काली धारियाँ होती हैं तथा कंधों पर यूरेशियन मार्श हैरियर की मादा की तरह सफेद रंग होता है, किन्तु इनका सिर सफेद नहीं होता। अवयस्कों के पंखों पर स्लेटी रंग नहीं होता। ये वैसे तो यूरेशियन मार्श हैरियर से काफी मिलते जुलते हैं, किन्तु आकार में उनसे छोटे एवं काफी फुर्तीले होते हैं।

ईस्टर्न मार्श हैरियर

ये आकार एवं रंग रूप में काफी कुछ यूरेशियन मार्श हैरियर से मिलते जुलते हैं। इनमें नर का सिर एवं सिर के नीचे का भाग तथा पंखों के सिरे काले होते हैं। शरीर का अग्रभाग जैसे गला, वक्ष, उदर सफेद होता है, जिसपर भूरी धारियां होती हैं। पंखों के नीचे का भाग सफेद होता है। इनकी पूँछ स्लेटी होती है तथा उसके

ऊपर सफेद रंग दिखाई देता है। मादा भूरे रंग की होती है, जिनकी पूँछ धारीयुक्त होती है तथा पूँछ के ऊपर सफेद रंग दिखाई देता है। मादा यूरेशियन मार्श हैरियर की तरह होती है, जिनका सिर पीलापन लिये हुए धारीयुक्त होता है, किन्तु इनमें अग्रभाग भी धारीयुक्त होता है। अवयस्क मादा से अधिक भूरे होते हैं तथा इनका भी अग्र भाग धारीयुक्त होता है।

प्राकृतिक आवास

हैरियर्स का जीवन खुले मैदानी भागों के अनुकूल होता है। ये खुले घास के मैदानों, कृषि भूमि, बंजर छोटी झाड़ीयुक्त जंगलों, उथले जलस्थलों, झील एवं नदियों तथा समुद्र तटीय क्षेत्रों में आसानी से देखे जाते हैं। ये 3000 मीटर की ऊँचाई तक पाये जाते हैं।

1. मॉन्टेगूस हैरियर (*सर्कस पायगर्गस*) : घास के मैदान, कृषि भूमि, नम भूमि,
2. पैलिड हैरियर (*स. मैक्रूरस*) : घास के मैदान, कृषि एवं अर्धमरू भूमि,
3. हैन हैरियर (*स. सायनियस*) : ऊँचे पर्वतीय भाग, उथले जलीय स्थान, कृषि भूमि,
4. पाईड हैरियर (*स. मैलेनोल्यूकस*) : जलीय स्थल, धान के खेत, अधिकाँशतः नम घास के मैदान,
5. यूरेशियन मार्श हैरियर (*स.ऐरूजिनोसस*) : उथले जल स्थल, झील एवं नदी तथा समुद्र तटीय क्षेत्र, धान के खेत, कृषि भूमि,
6. ईस्टर्न मार्श हैरियर (*स.स्पिलोनोटस*) : जलीय स्थल, धान के खेत एवं नम घास के मैदान।

हैरियर पक्षियों की भूमिका

ये पक्षी खाद्य श्रृँखला के शीर्ष पर होते हैं, अतः इनकी उपस्थिति वातावरण की समृद्धि का सूचक है। कहने का तात्पर्य है कि जहाँ ये बहुतायत में पाये जाते हैं, वहाँ अन्य प्राणी, जो इनका भोजन है, भी बहुतायत में होंगे, वहाँ अच्छे घास के मैदान तथा जल क्षेत्र होंगे। ये पक्षी चूहों, टिड्डों एवं फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले छोटे पक्षियों को अपना भोजन बनाते हैं और प्राकृतिक नियंत्रक का काम भी करते हैं। अतः किसानों के मित्र भी होते हैं ।

हैरियर पक्षियों का संरक्षण

चूँकि ये पक्षी जमीन पर ही अपना जीवन अधिक व्यतीत करते हैं, अतः खुले मैदानी भाग इनके जीवन की मुख्य आवश्यकता है। इनके ये प्राकृतिक मैदानी आवास मानव हस्तक्षेप के कारण अब तक अधिक खतरे में पड़ते जा रहे हैं। उदाहरणतः घास के मैदान, जिन पर ये पक्षी अपना अधिकतम समय व्यतीत करते हैं, वे मानव द्वारा कृषि भूमि, वृक्षारोपण, आवासीय निर्माण आदि के प्रयोग में लाये जा रहे हैं। जलीय क्षेत्र अब तेज गति से मानव हस्तक्षेप के कारण नष्ट होते जा रहे हैं। फलतः इन पक्षियों की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है और कुछ प्रजातियाँ, जैसे पैलिड हैरियर तो संकटग्रस्त श्रेणी में घोषित हो चुका है। खेतों में कीटनाशक दवाओं के बढ़ते उपयोग से भी इन पक्षियों का जीवन काफी प्रभावित हो रहा है, जो ये अपने द्वारा खाये जाने वाले कीड़ों जैसे टिड्डे, चूहों एवं छोटे पक्षियों द्वारा ग्रहण करते हैं।

आइये, हम सब मिलकर हैरियर को बचायें ।

हिमालयी क्षत्र की अनुपम विरासत – कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य, हिमाचल प्रदेश

विवेक जोशी
भा.व.सं., देहरादून

समूचे हिमालय प्रदेश की वन्य भूमि में मानव हस्तक्षेप के कारण मानव व वन्यजीवों के बीच टकराव पिछले कुछ दशकों में काफी तेजी से बढ़ा है। इस टकराव का मुख्य कारण अछूते वन प्रदेशों में मानव द्वारा अतिक्रमण एवं वन संसाधनों का दोहन है। फिर भी कुछ भूप्रदेश जो मानव आबादी के दबावों से बच गये हैं वहाँ अभी भी प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य एवं वन्यजीवों को उनके प्राकृतिक पर्यावास में स्वच्छन्दता से घूमते देखा जा सकता है। चम्बा जिले में तहसील भरमौर के अन्तर्गत् आने वाला कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य एक ऐसा ही भू–प्रदेश है । यह वन्यजीव अभ्यारण्य उत्तर दिशा में 32–25–32–35 अक्षांशों एवं पूर्व में 76–35–76–55 देशान्तरों के मध्य उच्च हिमालयी क्षेत्र में स्थित है। उत्तर दिशा में पीर पंजाल पर्वत श्रृंखला इस वन्यजीव अभ्यारण्य की सीमा रेखा बनाती है, तो पूर्व में बड़ा बंधाल की पहाड़ियाँ इस वन्यजीव अभ्यारण्य की सीमा रेखा तय करती हैं। कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य का भू–प्रदेश अत्यंत दुष्कर प्राकृतिक चुनौतियां प्रस्तुत करता है। संभवतः इसी कारण वर्तमान में भी भारी मानव आबादी के हस्तक्षेप से बचा हुआ है। यह वन्यजीव अभ्यारण्य समुद्र सतह से 2500 मीटर की ऊँचाई से शुरू हो कर 5500 मीटर तक की ऊँची पहाड़ियों से घिरा हुआ है। इस शरण्य की जलवायु शीतोष्ण यूरोपीय प्रदेशों से काफी मिलती जुलती है। 2000 मीटर से 2800 मीटर तक वन्यजीव अभ्यारण्य की उत्तरमुखी ढलानों पर शीतोष्ण शंकुलधारी वन पाये जाते हैं। जिसमें देवदार, सिल्बर, फर, रेंज एवं चीड़ के वृक्ष प्रमुख हैं। कहीं–कहीं पर शीतोष्ण पर्णपाती वन भी पाये जाते है। चीड़ के वृक्ष मुख्यतः दक्षिणमुखी ढलानों पर पाये जाते हैं जबकि देवदार, सिल्बर, फर एवं रेंज, के वृक्ष अपेक्षाकृत ठंडी उत्तरमुखी ढलानों पर उगते हैं। 2800–3500 मीटर तक की ऊँचाई का क्षेत्र बुरांस भोजपत्र एवं जनिपेरस की झाड़ियों से ढँका हुआ है, जबकि इससे ऊपर के इलाके वृक्षहीन हैं। फिर भी यह विषम जलवायुवीय प्रदेश जैवविविधता मे काफी सम्पन्न है। नवम्बर से मार्च तक पूरे वन्यजीव अभ्यारण्य में भारी बर्फबारी होती है। इस दौरान यहाँ का तापमान शून्य से 10 डिग्री सेल्सियस तक नीचे गिर जाता है। मार्च के अन्तिम सप्ताह में बसंत का आगमन होता है और मई के मध्य तक धीरे–धीरे तापमान में वृद्धि होती है। जून से अगस्त के प्रारंभिक सप्ताह तक वर्षा ऋतु एवं सितम्बर से अक्टूबर तक शरद ऋतु होती है।

जाड़ों से ऋतु बसंत एवं कुछ सप्ताहों की छोटी सी गर्मियों तक तापमान में काफी धीरे वृद्धि होती हैं एवं अगस्त के बाद तापमान मे गिरावट आने लगती है। इस वन्यजीव अभ्यारण्य में लगभग 1400 मि.मी. वार्षिक वर्षा रिकार्ड की गई है। इस वन्यजीव अभ्यारण्य से 16

किलोमीटर दूर कुग्ती नाम का गाँव बसा हुआ है। गाँव में लगभग 2500 लोग रहते हैं। भू–प्रदेश पर्वतीय होने के कारण एवं थोड़ी गर्मी होने से यहाँ के लोग साल में सिर्फ दो फसलें ही उगा पाते हैं। गेहूँ और मक्का यहाँ की मुख्य फसलें हैं। जौ, बाजरा, राजमा एवं आलू की फसलें छोटी सी गर्मियों के दौरान व बरसात के मौसम में भी तैयार हो जाती हैं। ये फसलें सितम्बर मध्य तक कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं, इस समय यहाँ के जनजातीय लोग फसलों के पक जाने की खुशी में त्यौहार मनाते हैं। कुछ किसान सेब, आड़ू एवं खुमानी भी उगाते हैं। लोगों की आय का मुख्य साधन कृषि, पशुपालन, अकाष्ठ वनोपज संग्रह एवं जड़ी–बूटी संग्रह है। गाँव में लोग मवेशी पालन भी करते हैं, जिसमें भेड़, बकरियाँ, गायें, खच्चर व बैल प्रमुख हैं। बसंत से वर्षा ऋतु के मध्य गद्दी चरवाहे अपनी भेड़ बकरियाँ, कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य से बाहर ले आते हैं। इस पूरे प्रवास के दौरान लगभग 25–30 हजार भेड़–बकरियाँ इन पर्वतीय चरागाहों में चरती हैं। पिछले कुछ वर्षों से रेवड़ों की संख्या में भारी बढ़ोतरी होने से इन चरागाहों की जैवविविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। कई वैज्ञानिक शोध इस बात की पुष्टि करते हैं कि रेवड़ों की भारी संख्या के कारण ये चरागाह अपनी विशिष्टता खोते जा रहे हैं। भूक्षरण मृदा–विन्यास एवं मृदा के पोषक तत्वों मे बदलाव के कारण इन चरागाहों में उगने वाली कई वनस्पतियां खतरे में पड़ गई हैं। इन चरागाहों में पड़ने वाले अत्यधिक जैविक दबावों के कारण इन क्षेत्रों में पाये जाने वाले वन्यजीवों की संख्या में भारी कमी आई है। जिसका मुख्य कारण भोजन की अनुपलब्धता एवं शिकार है। कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य हिमालय के भूरे भालू के कुछ बचे हुए पर्यावास में से एक है, जहाँ मानव हस्तक्षेप धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है तथा वन्यजीव पर्यावास खतरे में है। यह वन्यजीव अभ्यारण्य भूरे भालुओं के लिए प्रसिद्ध है। कई देशी व विदेशी पर्यटक हर वर्ष यहाँ भालू देखने पहुँचते हैं। अन्य जीव, जो इस शरण्य में पाये जाते हैं, उनमें काला भालू, तेन्दुआ, हिम तेन्दुआ, कस्तूरी मृग, भरल, थार एवं घोरल, छोटे स्तनपायी जन्तुओं में हिमालय की लाल लोमड़ी, पाइका एवं पीले गले वाले मार्टिन प्रमुख हैं। शंकुलधारी वनों में जंगली मुर्गी, मोनाल, कोकलास एवं फैजेन्ट भी प्रचुरता में पाये जाते हैं। मोनाल फैजेन्ट हालांकि काफी ऊँचाई तक लगभग 3700 मीटर तक रिकार्ड किये गये हैं। इस वन्यजीव अभ्यारण्य की प्रमुख समस्या मानव आबादी का बढ़ना एवं लोगों की जंगल पर निर्भरता बढ़ना है। चरवाहों की पर्वतीय चरागाहों का अवैज्ञानिक रूप से प्रयोग भी बड़ी समस्या के रूप में उभर रहा है, जिससे भू–क्षरण एवं अवांछित वनस्पति का फैलाव चरागाहों में बढ़ रहा है। बसंत एवं शरद ऋतु के दौरान कई बार लोग अवैध शिकार भी करते हैं। वर्ष 2006 से कुग्ती वन्यजीव अभ्यारण्य में भूरे भालू के पर्यावास, घनत्व एवं मानव व भूरे भालू के बीच संघर्ष को लेकर एक–तीन वर्षीय शोध कार्यक्रम भारतीय वन्यजीव संस्थान द्वारा चलाया गया है। उम्मीद है कि यह शोध कार्य भूरे भालू के पर्यावास पर मानव हस्तक्षेप के दबावों को कम करने की दिशा में मील का पत्थर साबित होगा।

भारत में बाघ परियोजनायें एवं संरक्षण

जगदीश प्रसाद सती
भारतीय प्राणि सर्वेक्षण विभाग, देहरादून

भौगोलिक एवं जलवायु की दृष्टि से भारत का भू–भाग वन्य प्राणियों के लिये उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है। भारत में लगभग 400 स्तनधारी प्राणी प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इन प्रजातियों में लगभग 15 प्रजातियाँ बिल्ली परिवार की हैं। बिल्ली प्रजातियों में बाघ (*पेन्थेरा टिगरिस*), इस परिवार का प्रमुख सदस्य है। यह अपनी शारीरिक बनावट, क्षमता एवं ताकत के आधार पर सम्पूर्ण प्राणी–जगत में अपना स्थान सर्वोपरि बनाये हुये है। साथ ही यह भारत का राष्ट्रीय पशु भी है।

सन् 1969 में इसकी लगातार घटती जनसंख्या के कारण इसके शिकार पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तथा वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 में इनके शिकार पर प्रतिबन्ध को कानून का रूप दे दिया गया और इसको राष्ट्रीय पशु भी घोषित किया गया। सन् 1972 में हुई गणना के आधार पर इनकी संख्या मात्र 1,827 के लगभग पायी गयी और इसके पश्चात् लगातार घटती संख्या को ध्यान में रखते हुए, भारतीय वन्यजीव सलाहकार मण्डल ने बाघ बाहुल्य क्षेत्रों को संरक्षित क्षेत्र घोषित करने की संस्तुति कर इसे बाघ परियोजना (प्रोजेक्ट टाइगर) का नाम दिया। यह परियोजना सन् 1973 से कार्यान्वित हुई और लगभग 13,017 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को 9 बाघ संरक्षण केन्द्रों के रूप में स्थापित किया गया।

पारिस्थितिकी तंत्र में बाघ का महत्वः कई कड़ियों के सामंजस्य से पारिस्थितिकी तंत्र जीवित रहता है। यदि एक भी कड़ी में असंतुलन आया तो यह तंत्र स्थिर नहीं रह पाता है। इसी प्रकार वनों के पारिस्थितिकी पिरामिड में बाघ शीर्ष स्थल पर स्थित होने के कारण यह पर्यावरण संतुलन का सूचक माना जाता है। यह शाकाहारी पशुओं का शिकार कर उन पर नियंत्रण रखता है, ताकि इनकी अधिक संख्या होने से पेड़–पौधों को नुकसान न पहुँचे। इस तरह हम कह सकते हैं कि बाघ पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण अंग है। इनके प्रसार एवं बाहुल्य के आधार पर 23 परियोजनायें स्थापित की गयीं, जो इस प्रकार हैं :

कार्बेट राष्ट्रीय उद्यानः हैली राष्ट्रीय उद्यान के नाम से, प्रकृतिवादी जिम कार्बेट की सलाह पर 1936 में इसकी स्थापना हुई थी। तत्पश्चात् 1 अप्रैल, 1973 को प्रथम बाघ अभ्यारण्य बनाया गया, जो आज कार्बेट टाइगर रिजर्व के नाम से जाना जाता है। यह रामगंगा की तलहटी एवं नैनीताल जनपद की शिवालिक पहाड़ियों में लगभग 1,316 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। इसी उद्यान से भारत में बाघ परियोजना का श्री गणेश हुआ था। इस उद्यान में बाघ के अलावा हाथी, चीतल, सांभर, मगरमच्छ व अन्य कई वन्यप्राणी पाये जाते हैं।

कान्हा राष्ट्रीय उद्यानः मध्य प्रदेश के मण्डला जनपद में स्थित यह उद्यान सन् 1933 में एक अभ्यारण्य के रूप में स्थापित किया गया था। इस अभ्यारण्य की सम्पदा को ध्यान में रखते हुए सन् 1955 में इसे राष्ट्रीय उद्यान के रूप में परिवर्तित किया गया, तत्पश्चात् 1973 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इसका कुल क्षेत्रफल 1,945 वर्ग किलोमीटर है। मध्यभारत का यह रमणीय उद्यान बाघों के अलावा बारहसिंगा, चीतल, काला मृग, नीलगाय तथा भालू आदि वन्य–जीवों के लिए अति उपयोगी है।

रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान : राजस्थान राज्य के सवाई माधोपुर ज़िले में स्थित यह उद्यान सन् 1957–58 में स्थापित किया गया तथा सन् 1973 में इसको भी बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इसका क्षेत्रफल लगभग 1,334 वर्ग किलोमीटर है। बाघ के साथ–साथ यहाँ तेंदुए, चिंकारा, चीतल, नीलगाय, सुअर, साम्भर आदि वन्यप्राणी पाये जाते हैं।

दुधवा राष्ट्रीय उद्यान : यह उद्यान उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी में सन् 1968 में वन्यजीव अभ्यारण्य के रूप में स्थापित किया गया था। तत्पश्चात् सन् 1977 में इसे राष्ट्रीय उद्यान में परिवर्तित किया गया तथा सन् 1987 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। नेपाल की तराई से लगा हुआ यह उद्यान बारहसिंगा, बाघ, तेन्दुआ, भूरे भालू, हॉग डियर, चीतल, आदि वन्यप्राणियों के लिये उपयुक्त है। सन् 1985 में असम से लाकर गैंडे भी छोड़े गये थे, जो अपने को इस वातावरण के अनुकूल पाते हैं। नेपाल से भी वन्यप्राणियों का इस उद्यान में आवागमन होता रहता है।

पन्ना राष्ट्रीय उद्यान : मध्यप्रदेश के पन्ना ज़िले में स्थित इस उद्यान का कुल क्षेत्रफल 542 वर्ग कि0मी0 है। सन् 1981 में इसे राष्ट्रीय उद्यान घोषित किया गया था और 1994 में इसे बाघ परियोजना में शामिल किया गया। उद्यान में केन नदी तथा सघन वन क्षेत्र होने के कारण इसमें बाघ, चिंकारा, चीतल, सांभर, भेड़िया और भालू के साथ–साथ कई प्रजातियों के पक्षी, मछलियाँ व कीट–पतंगे भी पाये जाते हैं।

बान्धवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान : मध्यप्रदेश के रीवा जनपद में स्थित यह उद्यान सन् 1968 में राष्ट्रीय उद्यान बना तथा 1993 में इसे बाघ परियोजना में शामिल कर लिया गया। इसका कुल क्षेत्रफल 1,662 वर्ग कि0मी0 है। इस उद्यान में सफेद बाघ के अतिरिक्त प्रमुख रूप से बाघ, तेन्दुआ, गौर, चीतल, सांभर, नीलगाय, भालू, गीदड़, लोमड़ी, तथा चिंकारा पाये जाते है। गौर इस उद्यान की शान है तथा कई वन्य प्रजातियों कीट–पतंगों एवं पक्षियों के लिये भी यह उद्यान स्वस्थ पारिस्थितिकी प्रदान करता है।

पेंच राष्ट्रीय उद्यानः मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्यों में स्थित इस उद्यान की स्थापना सन् 1977 में हुई थी। इसका 449 वर्ग किमी क्षेत्र मध्य प्रदेश एवं 951 वर्ग किमी महाराष्ट्र राज्य में स्थित है। सन् 1992–93 में इस उद्यान को बाघ परियोजना में शामिल किया गया । सतपुड़ा की पहाड़ियों में मिश्रित पतझड़ वाला वन क्षेत्र, बाघ, तेंदुआ, साम्भर, चीतल, गौर, नीलगाय, और पक्षियों के लिये उपयुक्त है।

मेलघाट वन्यजीव अभ्यारण्यः महाराष्ट्र राज्य में स्थित इस अभ्यारण्य को सन् 1973 में बाघ

परियोजना में शामिल किया गया। गोरिलागढ़ की पहाड़ियों में स्थित इस अभ्यारण्य के ऊपरी भाग में ताप्ती नदी बहती है। इस क्षेत्र में टीक एवं मिश्रित पतझड़ वाले वन पाये जाते हैं। यहाँ बाघ तेन्दुआ, चिंकारा, नीलगाय, मृग, जंगली सुअर और जंगली कुत्ते पाये जाते हैं।

सरिस्का राष्ट्रीय उद्यानः राजस्थान में जयपुर–अलवर मार्ग पर स्थित इस अभ्यारण्य को सन् 1979 में बाघ परियोजना व सन् 1982 में इसे उद्यान का दर्ज़ा मिला। सरिस्का, घाटियों एवं पहाड़ियों का क्षेत्र है। इस उद्यान में बाघ, जंगली कुत्ता, नीलगाय, चिंकारा, चौसिंगा, भालू और चीतल पाये जाते हैं।

वाल्मिकी वन्यजीव अभ्यारण्यः बिहार राज्य के पश्चिमी चम्पारण ज़िले में स्थित यह अभ्यारण्य सन् 1970 में स्थापित किया गया था। 1989–90 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इस अभ्यारण्य का क्षेत्रफल लगभग 840 वर्ग किमी है। इसमें मिश्रित पतझड़ वन, नदी तटीय वन एवं घास के विस्तृत मैदान हैं। इसमें बाघ, गौर, चीतल, साम्भर व भालू हैं।

इन्द्रावती राष्ट्रीय उद्यानः छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर जिले में स्थित इस उद्यान की स्थापना सन् 1978 में हुई थी। सन् 1983 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इसका क्षेत्रफल 2,799 वर्ग किमी है। यह उद्यान छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश एवं उड़ीसा राज्यों तक विस्तृत है। यहाँ जंगली भैंसा, बाघ, हिरण, चीतल, साम्भर, नीलगाय, चिंकारा, काला मृग, गौर, भालू, तेंदुआ, गीदड़, भेड़िया तथा कीट–पतंगे एवं पक्षी पाये जाते हैं।

पलामू/बेतला वन्यजीव अभ्यारण्यःझारखण्ड राज्य के रोहतास एवं पलामू जिलों में विस्तृत यह अभ्यारण्य सन् 1960 में स्थापित किया गया और 1973 में बाघ परियोजना में शामिल किया गया था। इसका कुल क्षेत्रफल 1,026 वर्ग किमी है। इस अभ्यारण्य की मुख्य वनस्पति बांस एवं साल के वृक्ष हैं। इसमें पाये जाने वाले मुख्य वन्यप्राणियों में बाघ, हाथी, गौर, चीतल सांभर, नीलगाय, आदि हैं। यहाँ लगभग 140 प्रजातियों के पक्षी पाये जाते हैं।

बक्सा वन्यजीव अभ्यारण्यः पश्चिम बंगाल में स्थित इस अभ्यारण्य का कुल क्षेत्रफल 759 वर्ग किमी है। सन् 1982–83 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया था । यह उत्तर में भूटान एवं पूर्व में मानस टाइगर रिजर्व से लगा हुआ है। यहाँ साल के वृक्ष पाये जाते हैं। इसमें बाघ, हाथी, गौर, सांभर, तेन्दुआ, भालू, कई प्रजातियों के पक्षी एवं कीट–पतंगे भी पाये जाते है।

सुन्दरवन राष्ट्रीय उद्यानः यह उद्यान पश्चिम बंगाल में स्थित है। इसका क्षेत्रफल लगभग 2,585 वर्ग किमी है। सन् 1973 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया था। इसका अधिकांश भाग मैन्ग्रोव, दलदली वनों में फैला हुआ है। यहाँ बाघ, हाथी, गौर, तेंदुआ, चीतल, विभिन्न पक्षी व कीट–पतंगे पाये जाते हैं। यहाँ सर्वाधिक बंगाल रायल टाइगर पाये जाते हैं।

मानस राष्ट्रीय उद्यानः यह असम राज्य के कोकाराझार जिले में भूटान के सीमावर्ती क्षेत्र में स्थित है। इसकी स्थापना सन् 1928 में हुई थी। इस उद्यान को सन् 1973–74 में बाघ परियोजना में शामिल किया गया । इसका

क्षेत्रफल लगभग 2,840 वर्ग किमी है। मानस एवं संकोस इसमें बहने वाली प्रमुख नदियाँ हैं। इसमें मिश्रित पतझड़ वाले वन एवं घास के मैदान हैं तथा बांस भी पाया जाता है। बाघ एवं हाथियों का यह सघन क्षेत्र है। यहाँ सुनहरे लंगूर, गैंडा, जंगली भैंसा, पिग्मी हाग, तेंदुआ आदि दूसरे प्रमुख प्राणी हैं।

नम्दाफा राष्ट्रीय उद्यानः अरुणाचल राज्य के तिराप ज़िले में स्थित यह उद्यान सन् 1972 में स्थापित किया गया था। सन् 1983 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इस उद्यान का कुल क्षेत्रफल 1,985 वर्ग किमी है। सदाबहार, मिश्रित एवं पतझड़ वाले वन इसमें पाये जाने वाले वन्यप्राणियों को अति उपयोगी हैं। उद्यान के ऊँचाई वाले क्षेत्रों में अल्पाइन वन भी पाये जाते हैं। मुख्य वन्यप्राणियों में बाघ, तेंदुआ, हूलॉक गिब्बन, बंदर, लंगूर, गोरल एवं ताकिन भी पाये जाते हैं।

दाम्पा वन्यजीव अभ्यारण्यः यह अभ्यारण्य मिजोरम राज्य के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में स्थित है। इस अभ्यारण्य को सन् 1994–95 में बाघ परियोजना में शामिल किया गया। प्रमुख रूप से बांस एवं अर्ध सदाबहार वन पाये जाते हैं। यहाँ पाये जाने वाले वन्यप्राणियों में मुख्य रूप से बाघ, तेन्दुआ, बारहसिंगा, गोरल, काकड़ आदि हैं।

नागार्जुन सागर वन्यजीव अभ्यारण्यः इस वन्यजीव अभ्यारण्य की स्थापना सन् 1978 में हुई थी। इसको 1983 में बाघ परियोजना में शामिल किया गया था। इसका कुल क्षेत्रफल 3,568 वर्ग किमी है। शुष्क मिश्रित पतझड़ वाले वन में झाड़ियाँ एवं बांस की अधिकता एवं उष्ण कटिबन्धीय वनों के होने से इस अभ्यारण्य में वन्यप्राणी बहुतायत में मिलते हैं। इसमें बाघ, तेन्दुआ, भालू, भेड़िया, लकड़बग्घा, नीलगाय, साम्भर, चीतल, बन्दर, लंगूर एवं शेरपुच्छि बन्दर आदि पाये जाते हैं।

पेरियार राष्ट्रीय उद्यानः केरल राज्य में स्थित इस उद्यान की स्थापना सन् 1934 में नेल्लिथम परट्ढी अभ्यारण्य के नाम से हुई थी। इसको सन् 1979 में बाघ परियोजना में शामिल किया गया था। इसका क्षेत्रफल लगभग 777 वर्ग किमी है। यहाँ हाथी, बाघ, भालू, भेड़िया, मृग, बन्दर, लॉयन टेल्ड मकाक, काला लंगूर, स्लेंडर लोरिस आदि पाये जाते हैं।

बान्दीपुर राष्ट्रीय उद्यानः कर्नाटक राज्य में स्थित इस उद्यान की स्थापना सन् 1930 में हुई तथा सन् 1973 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इसका क्षेत्रफल 866 वर्ग किमी है। मैसूर–उटकमण्ड मार्ग इस पार्क को दो भागों में विभाजित करता है। बान्दीपुर राष्ट्रीय उद्यान से दक्षिण पश्चिमी घाट की अधिक नदियाँ प्रवाहित होती हैं। इसी कारण यहाँ वन्यजीव अधिक संख्या में पाये जाते हैं। इसमें हाथी, गौर, बाघ, हिरण, भालू, जंगली, सुअर, कई विसर्पी एवं कीट–पतंगे आदि पाये जाते हैं।

सिमलीपाल राष्ट्रीय उद्यानः यह उद्यान उड़ीसा राज्य के उत्तर में सन् 1957 में स्थापित किया गया था और इसको अभ्यारण्य का दर्जा दिया गया था। सन् 1980 में इसको राष्ट्रीय पार्क एवं सन् 1973 में इसे बाघ परियोजना में शामिल किया गया। इसका क्षेत्रफल 2,250 वर्ग किमी है। इसमें अनेक जलप्रपात व नदियाँ बहती हैं।

इस पार्क में साल के वन अधिक मात्रा में हैं । यहाँ पाये जाने वाले वन्यप्राणियों में बाघ, हाथी, गौर, तेन्दुआ, चीतल सांभर, लंगूर, तथा विभिन्न प्रकार के पक्षी एवं कीट–पतंगे भी हैं।

कलाकड–मुन्डनथुराई वन्यजीव अभ्यारण्यः यह अभ्यारण्य तमिलनाडु में स्थित है। कलाकड एवं मुन्डनथुराई अभ्यारण्यों को जोड़कर इसको एक संयुक्त अभ्यारण्य बनाया गया। इन दोनों का संयुक्त रूप से क्षेत्रफल 800 वर्ग किमी है। सन् 1988 में इसको बाघ परियोजना में शामिल किया गया था। यहाँ के मिश्रित सदाबहार वनों में बाघ के अतिरिक्त हाथी, तेन्दुआ, बन्दर, लंगूर, सांभर, भालू एवं चीतल पाये जाते हैं।

तडोबा राष्ट्रीय उद्यानः महाराष्ट्र राज्य में स्थित इस उद्यान की स्थापना सन् 1935 में हुई थी। इसको बाघ परियोजना में सन् 1993–94 में शामिल किया गया । तडोबा में पहाड़ी क्षेत्र एवं मिश्रित पतझड़ वाले वन बाघ, तेन्दुआ, जंगली सुअर, गौर चीतल, सांभर नीलगाय, भेड़िया, बंदर, लंगूर के अतिरिक्त पक्षी, साँप, मेंढक एवं कीट–पतंगों के लिये उपयोगी है ।

बाघ संरक्षण के लिये उपायः भारत में बाघ के संरक्षण की लगातार कोशिश की जा रही है, ताकि इनकी संख्या में कोई कमी न आ पाये। इसी कोशिश में बाघ परियोजनाओं को स्थापित किया गया। अब प्रश्न यह उठता है कि जब बाघ बाहुल्य क्षेत्रों को संरक्षण प्रदान किया जा चुका है, तो बाघों की संख्या में वृद्धि के बजाय कमी क्यों आ रही है? इसको कार्यान्वित करने में कहीं न कहीं कुछ कमी है। इसके बेहतर कार्यान्वयन के लिये कुछ उपाय एवं सुझाव इस प्रकार हैं:

1. वनों का कटाव रोकना चाहिए ताकि इसमें वन्यप्राणियों की संख्या बढ़े और बाघों को उनके आवास में पर्याप्त भोजन मिल सके। जब इन्हें भरपेट भोजन नहीं मिलता है, तो ये समीपवर्ती क्षेत्रों में जाकर मवेशियों एवं मनुष्यों को ही अपना भोजन बना लेते हैं और फिर आदमखोर कहकर इन्हें मारा जाता है अतः इनको इन्हीं के आशियानों में यदि सम्पूर्ण भोजन मिल जाये तो इनकी संख्या में यकीनन वृद्धि होगी ।

2. बाघ परियोजना क्षेत्रों के आसपास रहने वाली जनता का यह दायित्व होना चाहिए कि वे बाघ संरक्षित क्षेत्र को हानि न पहुँचाये और शिकारियों को भी रोकें ताकि इनका शिकार न हो सके ।

3. वन अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सम्पूर्ण सुविधायें प्रदान की जायें ताकि वे इनके संरक्षण एवं कानून को कड़ाई से लागू कर सकें। इन्हें नई संरक्षण पद्धतियों एवं नई तकनीकी के विषय में प्रशिक्षण दिया जाये ताकि वे शिकारियों एवं तस्करों से मुकाबला कर सकें।

4. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इनके संरक्षण के साथ व्यापार एवं तस्करी पर रोक के लिये कानूनी कार्यवाही हो।

बाघ परियोजनायें तभी सार्थक है, जब बाघों को सम्पूर्ण संरक्षण मिले और बाघ संरक्षित क्षेत्र में रहने वाले बाघ एवं अन्य प्राणियों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी होती रहे।

मण्डल घाटी – जैव विविधता

गजेन्द्र सिंह गज्जू
भा.व.सं., देहरादून

पर्वतीय राज्य उत्तराखण्ड का सीमावर्ती जिला चमोली का प्रदेश के प्राकृतिक व जैव–विविधता संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान है। जिले में अनेक धार्मिक स्थान, ऊँचे– ऊँचे पर्वत और घाटियाँ विद्यमान हैं। फूलों की घाटी, नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान, केदारनाथ वन्यजीव अभ्यारण्य व अनेक प्राकृतिक तालाब जैसे वासुकी ताल, देवरिया ताल, लोकताल, नन्दीकुण्ड व रूपकुण्ड इसी जिले में स्थित हैं। इनमें जिला मुख्यालय से मात्र 13 किलोमीटर की दूरी पर स्थित मण्डल घाटी जिले की जैव–विविधता का प्रतिनिधित्व करती है।

समुद्र तल से 1500 मीटर की ऊँचाई पर स्थित मण्डल घाटी का सम्पूर्ण क्षेत्र विविधता पूर्ण है। चार किलोमीटर तक फैली समतल घाटी के बीचों–बीच बालखिला नदी बहती है, जिसमें अत्रि मुनि आश्रम से आने वाली अमृत गंगा आकर घाटी के मध्य में मिलती है। बालखिला नदी के दोनों और दूर–दूर तक फैले समतल खेत व खेतों से लगे हुए घने वनक्षेत्र स्थित है, जो बसंत के मौसम में निर्विकार जंगली झाड़ियों और फूलों की महक से महकती घाटी जीवन के दिव्य शिखर की ओर रखे जाने वाले हर कदम का अहसास कराती हैं, तो जाड़ों में यह घाटी जीवन की नश्वरता का अहसास कराने लगती हैं। इस घाटी की विशेषता यह है कि यहाँ न जाने कब बरसात हो जाये, कहा नहीं जा सकता। यहाँ आकर बुरांस के फूलों की लालिमा, सुनहरी धूप में हँसी बिखेरती बर्फीली चोटियाँ, बांज के जंगलों में चहचहाते पक्षी व उछलते–कूदते जीवों के समूहों के दर्शन जितना विश्वसनीय है, उतना ही अविश्वसनीय है, यहाँ का मौसम। इसलिए इस घाटी को "मिनी चेरापूँजी ऑफ गढ़वाल" के नाम से भी जाना जाता है।

मण्डल घाटी में प्रमुख रूप से छः गाँव स्थित हैं जो बालखिला नदी के दोनों ओर खेतों के मध्य स्थित हैं तथा घाटी को अन्य पर्वतीय घाटियों से पृथक् करती हैं। जिला मुख्यालय के समीप व यातायात की उचित व्यवस्था होने के कारण लोगों का रहन–सहन आधुनिक है। यद्यपि घाटी के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशुपालन है, परन्तु आधुनिकता के कारण बहुत कम परिवार ही पारम्परिक कृषि व पशुपालन का कार्य कर रहे हैं। घाटी में धान व गेहूँ को प्रमुखता से उगाया जाता है। इसके अतिरिक्त जौ, मडुवा, झिंगोरा, सोयाबीन, तोर व गहत भी प्रचुर मात्रा में उगाया जाता है। कुछ फल व सब्जियों का उत्पादन भी घाटी में व्यावसायिक स्तर पर होता है। पशुपालन में गायों व भैंसों को भेड़–बकरियों से ऊपर तरजीह दी गयी है।

केदारनाथ वन्यजीव अभ्यारण्य के बाहरी क्षेत्र में स्थित मण्डल घाटी का वानस्पतिक व जन्तु विविधता में अग्रणी स्थान है। बालखिला नदी को पार कर उत्तर की ओर 2–3 कि.मी. चलने पर सघन वनक्षेत्र प्रारम्भ होता है। यहाँ से आगे कदम बढ़ाते ही अहसास होने लगता है प्रकृति की अजेयता का, उसके रहस्यों की अगम्यता का, पहाड़ों के कठिन पर्वतीय जन जीवन का। इस क्षेत्र में पाये जाने वाले पेड़–पौधों की विविधता का अनुमान इस क्षेत्र में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के वनों से लगाया जा सकता है। चैम्पियन व सेठ के "रिवाइज्ड सर्वे ऑफ द फॉरेस्ट टाइप्स–1968" के अनुसार इस घाटी में आठ तरह के वन पाये जाते हैं। इन वनों में विभिन्न प्रकार के लगभग 640 पेड़ पौधे हैं, जिनमें से 69 पेड़, 90 झाड़ियाँ, 42 बेल, 35 जड़ी–बूटियाँ, 4 रिंगाल, 37 आर्किड्स तथा घास की 56 प्रजातियाँ प्रमुख हैं।

उपरोक्त विभिन्न प्रजातियों में पाये जाने वाले पेड़–पौधों में थुनेर, चिरायता, मेंदा, महामेंदा, दालचीनी, तिमूर जैसे औषधीय जड़ी–बूटियाँ इसी वन क्षेत्र में पायी जाती हैं। अत्यधिक प्रयुक्त होने वाली प्रजातियों में ओक (बाँज) व रिंगाल की चार–चार प्रजातियाँ प्रमुख हैं, जिनका प्रयोग लोगों द्वारा इमारती लकड़ी, ईंधन, चारे व व्यावसायिक प्रयोग हेतु किया जाता है। इसके अतिरिक्त पांगर, आंग्यार, चमखडिक, काफल, बुरांस आदि प्रजातियाँ भी बहुतायत में प्रयोग में लायी जाती हैं। जन्तु–विविधता के लिए भी मण्डल घाटी का स्थान महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में 20 से अधिक स्तनधारी जन्तु पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त लगभग 225 से अधिक पक्षी प्रजातियाँ, 52 प्रकार के कीट–पंतग, 6 प्रकार के साँप, एवम् 4 प्रकार की छिपकली पायी जाती हैं। घाटी के ऊँचाई वाले क्षेत्रों में कस्तूरा मृग, हिमालयन थार, घुरल तथा मोनाल पक्षी रहते हैं तथा कम ऊँचाई वाले स्थानों पर तेन्दुआ, भालू, काकड़, साँभर, कलीज फीजेन्ट व जंगली मुर्गा प्रमुख रूप से पाये जाते हैं।

भारतीय वन्यजीव संस्थान, देहरादून द्वारा किये जा रहे शोध से प्राप्त जानकारी के अनुसार ओक की दो प्रजातियाँ (बांज व खरसू) व घाटी में प्राप्त रिंगाल की चारों प्रजातियों (गोलू रिंगाल, जिमरा रिंगाल, देव रिंगाल व थाम रिगांल) पर अत्यधिक दबाव पाया गया है। वनक्षेत्र में अनियंत्रित पर्यटन, अनियमित कटान, चरान व चुगान से खरसू, बांज, व रिंगाल के पुनः उत्पादन में भारी कमी पायी गयी है। जिस कारण इन प्रजातियों का व इन पर निर्भर रहने वाले वन्यजीवों, प्रमुखतः मोनाल व कस्तूरा मृग के अस्तित्व पर संकट बढ़ रहा है।

अब समय आ गया है कि घाटी के स्थानीय लोग व्यवस्थित व संयमित रूप से प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग कर खुले व बंजर स्थानों पर रिंगाल, बांज आदि प्रजातियों का वृक्षारोपण कर घाटी के विकास में तथा जैव–विविधिता को बनाये रखने में अपनी भागीदारी बढ़ायें।

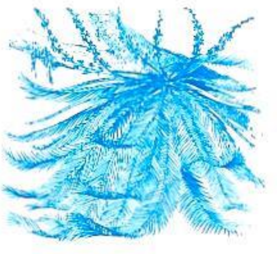

गोरीघाटी के दुर्लभ व विलुप्त होते ऑर्किड

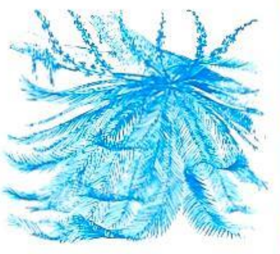

डा0 जीवन सिंह जलाल
भा.व.सं., देहरादून

गोरीघाटी उत्तराखण्ड के पिथौरागढ़ ज़िले में स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से यह घाटी मध्य हिमालय व पश्चिम हिमालय का मिलन केन्द्र है। गोरी नदी, काली नदी की सहायक नदी है और यह इस घाटी के मिलम ग्लेशियर से निकलते हुए जौलजीवी पर काली नदी के साथ मिलती है।

यह घाटी लगभग 600 मी0 से 5,000 मी0 तक की ऊँचाई में फैली है। गोरी नदी की अनेक सहायक नदियाँ हैं, जिनमें से मंदागनी नदी सबसे बड़ी सहायक नदी है। यह नदी पंचाचुली से निकलती है तथा मदकोट पर गोरी नदी के साथ मिलती है। वैज्ञानिक दृष्टि से अगर देखा जाये तो पूरे उत्तराखण्ड में एक घाटी है, जो छोटी होने के बावजूद तीनों हिमालयी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करती है। इसी कारण इस घाटी में जैवविविधता प्रचुर मात्रा में है। घाटी में अत्यधिक वर्षा व नमी रहने के कारण यहाँ वनस्पतियों की कई प्रजातियाँ हैं जो कि अपने रंगरूप आर्थिक व सामाजिक महत्व की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन्हीं वनस्पतियों में से एक समुदाय है ऑर्किड, जो कि पादप जगत में सबसे विकसित पौधों में से एक है। ये पौधे अपने विशिष्ट एवं रंग–बिरंगे फूलों के लिए संसार भर में प्रसिद्ध है। पूरे भारत में इनकी लगभग 1200 से अधिक प्रजातियाँ हैं जो कि मुख्यतः अधिक वर्षा व नमी वाले क्षेत्रों में पाई जाती है। भारत में इनकी अधिकतम संख्या पूर्वी हिमालयी क्षेत्र, पश्चिमी घाटों तथा पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में मिलती है। पश्चिमी हिमालय क्षेत्र जो कि उत्तराखण्ड से लेकर जम्मू व कश्मीर तक फैला है। इस पूरे क्षेत्र में ऑर्किड्स की 255 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। जिनमें से लगभग 120 प्रजातियाँ केवल गोरी घाटी में अकेले पायी जाती हैं, इसीलिए इस घाटी को ऑर्किड्स के लिए हॉटस्पॉट भी माना जाता है।

पूरे उत्तराखण्ड के 80 प्रतिशत ऑर्किड इसी घाटी में मिलते हैं तथा कई प्रजातियाँ ऐसी हैं जो कि पश्चिमी हिमालय में केवल इसी घाटी में उगती हैं। इस घाटी में मुख्य रूप से तीन प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती हैं एक अधिपादप (एपिफाइट्स) जो कि पेड़ों पर उगते हैं, दूसरे समोदभिदीय, जो कि जमीन पर उगते हैं और तीसरी मृतोपजीवी श्रेणी में आते हैं। ऐसे ऑर्किड सड़े–गले पदार्थ पर उगते हैं तथा ये अपना भोजन सड़े पदार्थो से ही प्राप्त करते हैं। आर्किडों की प्रजातियाँ भिन्न–भिन्न प्रकार की होने के कारण इनके पोषण की क्रियायें भी भिन्न–भिन्न होती हैं। अत्यधिक नमी रहने के कारण इस घाटी में अधिपादप ऑर्किड सबसे ज्यादा हैं। अधिपादप ऑर्किड्स मुख्यतः वून, मावा व चीड़ के पेड़ों पर लदे रहते हैं। इनकी

जड़ें हवा मे लटकती रहती हैं तथा ये केवल पेड़ों की टहनियों पर रहने की जगह प्राप्त करते हैं। इनका कोई परजीवी से सम्बन्ध नहीं होता है। इनकी जड़ों में एक विशेष प्रकार का ऊतक होता है, जो वायुमण्डल की नमी को अवशोषित करता है। अधिकतर अधिपादप ऑर्किड इस घाटी में जौलजीवी से लेकर मदकोट तक पाये जाते हैं। कुछ अधिपादप प्रजातियाँ चट्टानों तथा बड़े–बड़े पत्थरों पर भी उगते दिखाई देती हैं। अप्रैल से अगस्त तक यह घाटी रंग–बिरंगे ऑर्किड के फूलों से खिल उठती है, जो कि अत्यन्त ही रोचक व मनमोहक होती है। घाटी में स्थानीय भाषा में लोग इन्हें हरजोजन तथा भालू का केला के नाम से भी पुकारते हैं। इनमें से कई प्रजातियाँ ऐसी हैं जो कि स्थानीय लोगों के लिए आर्थिक, सामाजिक व औषधीय दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, जैसे – *डेकट्टाइलोराइजा अथाजिरा* (शालमपंजा) *हैबिनरिया इन्टरमीडिया* (रीधी) *मालेसिसस एक्यूमिनान्टा* तथा *साटेटियम नेपालिनसिस* (शालममिश्री)। शालम पंजा तथा शालममिश्री दोनों ऑर्किड प्रजातियों की जड़ों का प्रयोग टॉनिक बनाने में किया जाता है। इस घाटी में कुछ अधिपादप प्रजातियों, जैसे – *डेन्ड्रोवियम, सिलागाइन* व *सिमाबिडियम* की आधुनिक युग में फूलों के व्यापार जगत में दुनिया भर में बड़ी मांग है। इसके साथ–साथ घाटी में ऑर्किड–इकोटूरिज़्म की भी अपार संभावना है, जो कि स्थानीय लोगों की आर्थिक स्थिति में सहयोग देगी। लेकिन दुर्भाग्यवश आधुनिकता की अंधी दौड़ में मानव द्वारा इन ऑर्किड्स के अत्यन्त दोहन से बहुत सारी ऑर्किड प्रजातियाँ खत्म हो गई है और कुछ खत्म होने की कगार पर हैं। इनमें से कई प्रजातियाँ तो इतनी दुर्लभ हो गई हैं कि इनकी संख्या गिनीचुनी रह गई है। प्रश्न सामने आते हैं कि इनका दीर्घकालीन संरक्षण कैसे किया जाये? स्थानीय लोगों को इनसे कैसे लाभ पहुँचाया जाये? लोगों को कैसे इनके संरक्षण के प्रति जागरूक किया जाये? स्थानीय लोगों का जागरूक होना जरूरी है क्योंकि जब तक लोगों को यह एहसास न हो कि यह उनकी सम्पदा है और इनके संरक्षण से उन्हीं लोगों का फायदा है, तब तक संरक्षण के प्रयास लगभग निरर्थक है।

घाटी अत्यन्त दूर होने व सड़क व्यवस्था ठीक न होने के कारण बहुत कम लोग यहाँ तक पहुँच पाते हैं। बरसात में घाटी का सम्बन्ध अन्य क्षेत्रों से टूट जाता है। सड़क मार्ग द्वारा पहुँचने के मार्ग भी सीमित हैं। इस घाटी में लोगों को जीवनयापन बड़ी कठिनाई से करना पड़ता है। लोगों की आर्थिक निर्भरता सिर्फ कृषि व पशुपालन पर है, जो कि वनों पर निर्भर है। एक ओर आज हम संरक्षण की बात करते हैं तथा दूसरी ओर इस घाटी के लोगों की जंगलों पर बढ़ती निर्भरता को देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि जिस गति से वनों का दोहन हो रहा है, क्या आने वाले दिनों में हम इनका संरक्षण कर पायेंगे या इस घाटी की अद्भुत पादप सम्पदा को बचा पायेंगे या हमेशा के लिए खो देंगे?

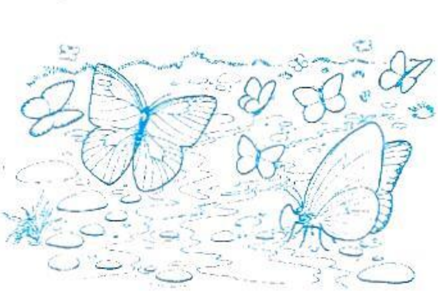

भारतीय वन्यजीव संस्थान की पृष्ठभूमि एवं गतिविधियाँ

बितापी सी. सिन्हा एवं के.के. श्रीवास्तव
भा.व.सं., देहरादून

पिछली शताब्दी में अस्सी के दशक के प्रारंभिक वर्षों में तेजी से कम हो रहे प्राकृतिक संसाधनों तथा सामने प्रस्तुत पर्यावरणीय संकट का प्रभाव, जीवन के सभी क्षेत्रों में महसूस किया जाने लगा था। उस समय पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में जानकारी अस्पष्ट थी, जिसके फलस्वरुप, पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने के लिये किये गये प्रारंभिक उपायों में कुछ कमियाँ रहीं। भारत में लोग भोजन, आश्रय तथा जीविकोपार्जन के लिये कमोबेश वनों पर आश्रित रहे हैं। स्पष्ट था कि एकाकी प्रयासों से संरक्षण नहीं किया जा सकता था तथा संरक्षित क्षेत्रों और उनके आसपास निवास करने वालों को निकाला भी नहीं जा सकता था।

शुरुआत में वन्यजीव प्रबंधन के लिये प्रशिक्षित जनशक्ति तथा अनुसंधान के लिये वन्यजीव वैज्ञानिकों की कमी खुलकर सामने आई। जो अनुसंधान पूर्व में हो चुका था, उसके बारे में भी बहुत कम जानकारी थी, जिसके कारण उचित संरक्षण योजना बनाने के लिये समस्याओं को समझना कठिन था। अतः ऐसे संगठन की आवश्यकता महसूस की गई, जो वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुये बहुविद्याक्षेत्रीय अनुसंधान द्वारा वन्यजीव संरक्षण के उपायों को खोज सके और तद्नुसार देश तथा पूरे क्षेत्र में वन्यजीवों और उनके प्राकृतिकवासों को प्रबंधित करते हुये समग्र पद्धति विकसित कर सके। आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है । परिणामतः वर्ष 1982 में देहरादून में भारतीय वन्यजीव संस्थान की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ, जो दक्षिण एशियाई क्षेत्र में एक प्रतिष्ठित संस्थान के रूप में उभरा। अपनी स्थापना के आरम्भिक वर्षों से ही संस्थान का यू0एन0डी0पी0, एफ0ए0ओ0, यू0एस0एफ0 डब्ल्यू0एस0, आई0यू0सी0एन0 तथा यूनेस्को जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से सामंजस्य बना हुआ है। इन संस्थानों के सहयोग से कठोर प्रशिक्षण तथा नवीनतम अनुसंधान तकनीकों की जानकारी प्राप्त करके संस्थान द्वारा प्रतिष्ठित संकाय संवर्ग तैयार किया गया है, जिसके फलस्वरूप संस्थान में अनुसंधान, शिक्षण और प्रशिक्षण का आधार विस्तृत हुआ है।

भारतीय वन्यजीव संस्थान, वन्यजीव संरक्षण में प्रशिक्षण और अध्ययन के लिये प्रमुख क्षेत्रीय संस्थान के रूप में जाना जाता है। अन्य विकासशील देशों, खासकर दक्षिण और दक्षिणपूर्वी एशियाई देशों के वानिकी और वन्यजीव प्रबंधक, संस्थान में वन्यजीव प्रबंधन पाठ्यक्रम में भाग लेते रहते हैं।

संस्थान ने वन्यजीव संरक्षण की अवधारणाओं तथा पद्धतियों को नई दिशा दी है। उन्हें अधिक व्यावहारिक और वास्तविक बनाया है और स्थानीय लोगों का सहयोग प्राप्त कर

उन्हें संरक्षण में शामिल किया है। फिर भी व्यापक और निरंतर बदलते हुये परिदृश्य में समस्यायें और चुनौतियाँ कम नहीं हुई हैं। संस्थान ने अपने तथा दूसरों के अनुभवों से सीखते हुये प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया है।

लक्ष्य तथा उद्देश्य

- वन्यजीव संसाधनों पर वैज्ञानिक ज्ञान को समृद्ध करना,
- वन्यजीव संरक्षण और प्रबंधन के लिये विभिन्न स्तरों पर कार्मिकों को प्रशिक्षित करना,
- भारतीय स्थितियों के लिये उपयुक्त तकनीकी विकास सहित, प्रबंधन से सम्बद्ध अनुसंधान करना,
- वन्यजीव प्रबंधन की विशेष समस्याओं पर सूचना और सलाह उपलब्ध कराना,
- वन्यजीव अनुसंधान, प्रबंधन और प्रशिक्षण पर अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से साझेदारी करना,
- वन्यजीव एवं प्राकृतिक संसाधन संरक्षण पर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के क्षेत्रीय केन्द्र के रूप में विकास करना।

संस्थान द्वारा वन्यजीव विज्ञान में एम0एस0सी0 पाठ्यक्रम सफलतापूर्वक जारी है। दोनों मुख्य पाठ्यक्रम, अर्थात् – वन्यजीव प्रबंधन में पी0जी0 डिप्लोमा तथा वन्यजीव प्रबंधन में सर्टीफिकेट पाठ्यक्रम, यथासमय आयोजित किये जाते हैं। संस्थान में वार्षिक अनुसंधान संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है, जिसमें संकाय सदस्यों, अनुसंधानकर्त्ताओं, स्नातकोत्तर प्रशिक्षुओं तथा सहयोगियों द्वारा पेपर प्रस्तुत किये जाते हैं। संस्थान द्वारा वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान सफलतापूर्वक जारी है। संस्थान द्वारा कुछ महत्वपूर्ण अल्पावधि पाठ्यक्रमों, कार्यशालाओं, संगोष्ठियों तथा बैठकों का आयोजन किया जाता है।

संस्थान की कम्प्यूटर सुविधाओं के मामले में, कम्प्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर की प्रभावशाली व्यवस्था है। इस व्यवस्था को संस्थान ने अपने संसाधनों तथा सहयोगात्मक परियोजनाओं से सुदृढ़ बनाया है। इस समय संस्थान की कम्प्यूटर सुविधा, अनुसंधान, प्रशिक्षण, डाटाबेस, जी0आई0एस0, सुदूर संवेदन, कार्टोग्राफिक तथा डेस्कटॉप प्रकाशन आवश्यकताओं के लिए सुविकसित है। संस्थान के पास विशेष कम्प्यूटर हार्डवेयर सेटअप है, जो लोकल एरिया नेटवर्क से जुड़ा हुआ है। संस्थान के सभी कम्प्यूटरों में इन्टरनेट तथा ई–मेल की सुविधा उपलब्ध है।

संस्थान के श्रव्य–दृश्य तथा वन्यजीव विस्तार प्रकोष्ठ द्वारा विभिन्न शैक्षिक क्रियाकलापों में योगदान दिया जाता है। सूचना प्रसारण कार्यक्रम के अन्तर्गत् वर्ष में चार न्यूज़लैटर प्रकाशित किये जाते हैं। प्रत्येक वर्ष 5 जून को संस्थान द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। संस्थान में अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में 'वन्यजीव सप्ताह' मनाया जाता है। वन्यजीव संरक्षण का संदेश प्रसारित करने के लिए विभिन्न क्रियाकलापों का आयोजन किया जाता है। संस्थान के संकाय सदस्य तथा अनुसंधानकर्त्ता कुछ स्कूलों में जैवविविधता संरक्षण पर व्याख्यान देते हैं। बच्चों के लिए विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। स्कूली छात्रों में

संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए संस्थान के द्वारा 'फ्रैण्ड्स ऑफ दून' के साथ मिलकर 'वन्यजीव एवं पर्यावरणीय प्रश्नोत्तरी' कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। इस कार्यक्रम में देहरादून के स्कूलों के छात्र भाग लेते हैं। विजेताओं को पुरस्कारस्वरूप भा0व0सं0–एफ0ओ0डी0 रोलिंग ट्रॉफी और पुस्तकें प्रदान की जाती हैं।

संस्थान में राष्ट्रीय वन्यजीव डाटाबेस प्रकोष्ठ है। प्रकोष्ठ में रिपोर्टों को संकलित करने, वेबसाइट में संशोधन करने, डाटा संग्रहण और उसके वैधीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है। जून 2008 में भारत में 614 संरक्षित क्षेत्र हैं, जिनमें 97 राष्ट्रीय उद्यान तथा 508 वन्यजीव अभ्यारण्य शामिल हैं, जिनका कुल क्षेत्रफल 1,55,937.55 वर्ग किमी है, जो देश के कुल भू–भाग का 4.76% है। प्रजाति डाटाबेस में सुधार किया जाता है और स्तनपाई प्रजातियों के विकास की सूचना जोड़कर उसे नवीनतम बनाया जाता है। राष्ट्रीय वन्यजीव डाटाबेस की वेबसाइट को नियमित रूप से नवीनतम बनाया जाता है।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार ने सितम्बर 1997 को 23वाँ पर्यावरणीय सूचना तंत्र केन्द्र भारतीय वन्यजीव संस्थान में स्थापित किया। संस्थान के एन्विस केन्द्र का विषय क्षेत्र 'वन्यजीव तथा संरक्षित क्षेत्र' हैं। एन्विस का उद्देश्य, ग्राहकों के विभिन्न वर्गों को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर पर्यावरणीय डाटा की संभावित परिधि और राष्ट्रव्यापी नेटवर्क के अन्तर्गत, नीति निर्माताओं से लेकर अनुसंधानकर्त्ताओं और उद्योगों से लेकर सामान्य लोगों को सहायता मुहैया कराना है। एन्विस केन्द्र ने पर्वतीय खुरदारों पर सातवाँ बुलेटिन प्रकाशित किया, जिसमें ग्रेटर तथा ट्रान्स हिमालय के पर्वतीय खुरदारों पर जानकारी दी गई है। पहले भाग में प्रजाति की प्रोफाइल तथा भारत और विश्व में उसके वितरण की जानकारी दी गई है। दूसरे भाग में, जम्मू एवं काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराँचल, सिक्किम तथा अरुणाचल प्रदेश सहित कई हिमालयी राज्यों में पर्वतीय खुरदारों के संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क, स्तर और प्रबंधन के बारे में बताया गया है। तीसरे भाग में हिमालयी क्षेत्र में पर्वतीय खुरदारों के संरक्षण हेतु तथा स्नो लेपर्ड के संरक्षण के लिये क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य का उल्लेख किया गया है।

प्रयोगशाला द्वारा संस्थान के शैक्षिक तथा प्रशिक्षण सम्बन्धी आयोजनों में तकनीकी सहायता दी जाती है और साथ ही अनुसंधान परियोजनाओं में विश्लेषणात्मक सहायता भी दी जाती है। विभिन्न यंत्रों और विश्लेषणात्मक तकनीकों, चर्म प्रसाधकों तथा जन्तुओं के लिंग और आयु का निर्धारण करने के सम्बन्ध में प्रैक्टीकल कराये जाते हैं। कक्षाओं में शिक्षण के बाद प्रयोगशाला स्टाफ द्वारा विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में, जीवित जन्तुओं और पक्षियों को पकड़ने और हैण्डल करने, कैमरा ट्रैप का प्रदर्शन करने, छोटे स्तनपाइयों को ट्रैप करने, विद्युत बाड़ का उपयोग करने, रेडियो टेलीमीटरी और चर्मप्रसाधन में तकनीकी सहायता दी जाती है। प्रयोगशाला परिष्कृत उपकरणों से सुसज्जित है। पादप नमूनों की विभिन्न जाँचें की जाती हैं। मांसभक्षियों की खाद्य आदतों का अध्ययन करने के लिए बाघ, जंगली कुत्ते, तेंदुआ, स्लॉथ बियर तथा हिमालयी काले भालू के तीन सौ

स्केट्स का विश्लेषण किया जाता है।

संरक्षण आनुवंशिकी प्रयोगशाला द्वारा प्राचीन भारतीय भेड़िया लाईनेज की खोज को रॉयल सोसाइटी लन्दन के बॉयलाजी लैटर्स में प्रकाशित किया गया। संस्थान के इस सहयोगात्मक अनुसंधान को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रचार मिला। भारतीय पक्षियों के बारे में जानकारियों के आधार पर, हवाई (**Hawaii**) में पक्षी–मलेरिया स्ट्रेन्स के बारे में सहयोगात्मक आधार पर अनुसंधान किया जा रहा है।

संस्थान के वनस्पति संग्रहालय के स्टाफ द्वारा कई राष्ट्रीय पार्कों तथा वन्यजीव अभ्यारण्यों से प्राप्त नमूनों की पहचान की गई। संग्रहालय के स्टाफ की मदद से परिसर में देशी घास प्रजातियों को उगाया गया, जैसे – *अरुन्डो डोनेक्स, फ्रेगमाइटिस करका, सेशेरम बैंगालेंसिस* तथा *सेशेरम स्पोन्टिनियम।* संग्रहालय शीट्स की अनुवृद्धि तथा लेवलिंग का कार्य किया जा रहा है। सर्टीफिकेट कोर्स के प्रशिक्षणार्थियों, एम0एस0सी0 के विद्यार्थियों और कई आगन्तुकों को सेक्शन द्वारा संग्रहालय की तैयारी और उपयोग के बारे में बताया जाता है।

संस्थान को कन्याकुमारी, तमिलनाडु में समुद्रतटीय तथा समुद्री जैव विविधता राष्ट्रीय संस्थान (एन0आई0सी0एम0बी0) स्थापित करने का गौरवपूर्ण दायित्व भी सौंपा गया था। यह संस्थान स्थापित कर लिया गया है।

संस्थान के उद्देश्य को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिये संकाय सदस्य तथा कर्मचारी ईमानदारी और समर्पण की भावना से कठोर परिश्रम करते हैं। आशा है, अपने कार्य के प्रति समर्पित संस्थान के वैज्ञानिकों और अधिकारियों की यह टीम, आने वाले वर्षों में देश के वन्यजीव अनुसंधान, शिक्षा तथा प्रबंधन को नई ऊँचाइयों तक पहुँचायेगी।

'कलम बोली'

गुमसुम बैठी कलम एक दिन
स्याही से यों बोली।
आओ मिलकर बच्चों के संग
कुछ करें हंसी ठिठोली।
कागज भैया को भी अपने
साथ में ले लेते हैं।
अ, आ, इ, ई, ए, बी, सी, डी,
लिख सबको खुश कर देते हैं।
रंग हमारे प्यारे साथी,
उनको भी बुलवाते हैं।
पर्वत, नदियाँ, ताल, तलैया
उनसे चिन्हित करवाते हैं।
पशु, पक्षी और वृक्ष, लतायें
कल–कल करते झरने।
जीवन के सब साधन हैं ये
ये भी चिन्हित करने।
दुनिया वाले पल–पल इनका
शोषण करते जाते हैं।
दुष्परिणाम भुगतते लेकिन
फिर भी नहीं अघाते हैं।
बिना विचारे जो करते हैं,
वे आखिर पछताते हैं।
आओ स्याही, आओ कागज,
मिलकर इन्हें बताते हैं।

भगवती प्रसाद उनियाल
भा.व.सं., देहरादून

वन्यजीव विज्ञान में परास्नातक पाठ्यक्रम

डा0 जी0एस0 रावत
भा.व.सं., देहरादून

"जीवविज्ञान में स्नातक स्तर की शिक्षा पूरी करने के बाद मैं साल–दो–साल भटकता रहा। मेरी इच्छा थी कि मैं प्रकृति की गोद में विचरण करते हुए उसके अनगिनत पहलुओं तथा संरक्षण व पारिस्थितिकी के आयामों का अध्ययन करूँ। परन्तु कहीं उपयुक्त विश्वविद्यालय या संस्थान नहीं मिल पा रहा था। सौभाग्य से सन् 1987 के अन्त में शंका के बादल छँटे। भारतीय वन्यजीव संस्थान, देहरादून, वन्यजीव विज्ञान में परास्नातक पाठ्यक्रम शुरू करने जा रहा था। एम.एस–सी. के दो वर्ष फिर पी–एच.डी. के पाँच वर्ष कब गुजर गये, मुझे पता ही नहीं चला। पर आज मैं यदि अपने अतीत की ओर देखता हूँ तो लगता है कि मेरे जीवन के सबसे अच्छे दिन भारतीय वन्यजीव संस्थान में बिताए एम.एस–सी. के ही थे, जिन्होंने मेरा साक्षात्कार प्रकृति के सर्वोत्तम स्वरूप से कराया था और असंख्य चीजें सीखने का अवसर दिया। एम. एस.सी. के दौरान, कान्हा राष्ट्रीय पार्क के घासीय मैदान में बारहसिंगा, हिरणों का मल्लयुद्ध, राजाजी में शिवालिक पहाड़ियों पर घोरलों से लुका– छिपी, दाछीगाम (कश्मीर) की वादियों में हंगुल व पक्षी समूहों के साथ साक्षात्कार तथा अरुणाचल प्रदेश के सदाबहार बनों में विचरण, मेरे अन्तःस्थल पर सदा बने रहेंगे"... ये उद्‌गार हैं कैलिफोर्निया स्टेट विश्वविद्यालय फ्रेसनो (सं.रा. अमेरिका) में अध्यापनरत डा0 मधुसूदन कट्टी के जिन्होंने भा.व.सं. से सन् 1988–90 में वन्यजीव विज्ञान में एम.एस–सी. पाठ्यक्रम पूरा किया था। यह संयोग ही था कि मधुसूदन के साथ 'जहाँ चाह–वहाँ राह' वाली कहावत सच हो गई, पर सन् 1980 तक देश में वन्यजीवन पर न अधिक शोध होते थे, न ही संरक्षण हेतु वैज्ञानिक आधार मिल पाता था। देश के अधिकाँश महाविद्यालयों में वन्यजीव प्रबन्धन, वानिकी संरक्षण विज्ञान जैसे विषय सुनने में भी नहीं आते थे। यहाँ तक कि जीवविज्ञान व पारिस्थितिकी जैसे विषय भी मात्र कुछ किताबी ज्ञान के आधार पर पढ़ाए जाते रहे हैं। विद्यार्थियों को प्रकृति, वनों, वनस्पतियों से साक्षात्कार करने का अवसर नहीं मिल पाता है। एक बार मेरे किसी मित्र ने टिप्पणी की थी "हमारे स्कूल–कॉलेजों में जीवविज्ञान पढ़ाने की शैली इतनी निर्जीव हो गई है कि विद्यार्थी इससे दूर भागने लगे हैं।" हाई स्कूल में बच्चा जीवविज्ञान पढ़ने के लिये प्रवेश करेगा और गुरूजी मरे हुए मेंढक से अध्याय शुरू करेंगे। वास्तव में यह बात कई मायनों में सच लगती है।

यूँ तो भारतवर्ष अब विकासशील देशों की श्रेणी में गिना जाने लगा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में देश ने अभूतपूर्व उन्नति की है, फिर भी पर्यावरण व वन्यजीव संरक्षण के प्रति समाज का काफी बड़ा हिस्सा संवेदनशून्य है। 'वन्यजीव प्रबन्धन' विषय पर थोड़े–बहुत व्याख्यान भारतीय वन महाविद्यालय, देहरादून में सन् 1980–85 तक दिये जाते रहे होंगे । सन् 1973 में देश में

बाघ परियोजना के शुरू होने के उपरान्त संरक्षण संबंधी कई अधिनियम व कानून आने लगे। फिर भी कई स्थानों में वन्यजीव संरक्षण की स्थिति नहीं सुधर रही थी। देश–विदेश के कई वन्यजीव प्रेमियों व संरक्षणविदों को वन्यजीव व्यवहार, प्राकृतिक आवास, रहन–सहन व पारिस्थितिकी पर वैज्ञानिक जानकारी हासिल न हो, तो उनके संरक्षण हेतु ठोस योजना नहीं बनाई जा सकती, यह स्पष्ट हो चुका था कि वन्यजीवों के प्राकृतिक आवास की स्थिति का आकलन व वन्यजीवों की संख्या का समय–समय पर अनुश्रवण (Monitoring) करने हेतु वैज्ञानिक आधार की आवश्यकता होती है।

देश भर के अभ्यारण्यों, राष्ट्रीय उद्यानों व कई संकटग्रस्त प्रजातियों पर महत्वपूर्ण आँकड़े एकत्र करने हेतु प्रशिक्षित एवं सुयोग्य मानव संसाधन की आवश्यकता महसूस हुई। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भारतीय वन्यजीव संस्थान में वन्यजीव विज्ञान में परास्नातक पाठ्यक्रम चलाने की आवश्यकता महसूस हुई, जिसकी नींव सन् 1985–86 में पड़ी। सन् 1985 में इस संस्थान में संयुक्त राष्ट्र की संस्था एफ.ए.ओ. के कुछ तकनीकी विशेषज्ञ कार्यरत थे। उन्हीं दिनों संस्थान ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के सहयोग से एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया, जिसका विषय था, "विश्वविद्यालयों में वन्यजीवन पर अध्ययन, अध्यापन की आवश्यकता"। इस संगोष्ठी में विख्यात पक्षी विशेषज्ञ डा0 सलीम अली, डा0 जेम्स टियर, श्री जे.सी. डेनियल, डा0 जे.बी. सेल, डा0 एलन रोजर्स, श्री हेमेन्द्र पंवार (तत्कालीन निदेशक, भा.व.सं.) डा0 आबिस मुसावी,डा0 ए. जे.टी. जॉनसिंह एवम् श्री वी.बी. सावरकर आदि ने भाग लिया। इस संगोष्ठी में तय हुआ कि भा.व.सं., देश भर के वन्यजीव प्रेमी विद्यार्थियों हेतु वन्यजीवन में परास्नातक पाठ्यक्रम शुरू करे। तदुपरान्त डा0 एलन रोजर्स ने कई अनुभवी वन्यजीवविदों की सहायता से वर्तमान पाठ्यक्रम का स्वरूप निर्धारित किया। अन्ततः सन् 1988 के जनवरी माह से परास्नातक पाठ्यक्रम शुरू हुआ। तत्कालीन निदेशक श्री हेमेन्द्र पंवार के अथक प्रयासों से सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट ने इस पाठ्यक्रम को एवं पी–एच.डी. उपाधि प्रदान करने हेतु संस्थान को मान्यता दी। आरम्भ में यह पाठ्यक्रम जनवरी से लेकर दूसरे वर्ष के दिसम्बर तक रखा गया था। दूसरे बैच से सौराष्ट्र विश्वविद्यालय के सत्रों के अनुरूप जुलाई से आरम्भ कर तीसरे जुलाई तक शिक्षण का कार्यक्रम रखा गया। संकाय सदस्यों की सीमित संख्या, अन्य कार्यकलापों व प्रशिक्षण को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लिया गया कि हर दूसरे वर्ष में यह पाठ्यक्रम विज्ञापित किया जायेगा । अर्थात् एक बैच पूरा होने के बाद ही दूसरे बैच को प्रवेश मिलेगा। इस प्रकार सन् 1988 से शुरू होकर वर्तमान में 11वां बैच इस पाठ्यक्रम को पूरा कर रहा है।

प्रवेश की विधि एवं पात्रताः इस पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने हेतु अभ्यर्थियों को अखिल भारतीय स्तर की प्रवेश परीक्षा (लिखित एवं मौखिक) उत्तीर्ण करनी होती है। परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त, वरीयता अनुसार प्रथम दस अभ्यर्थी ही इस पाठ्यक्रम में प्रवेश पा सकते हैं। परीक्षा में शामिल होने के लिए विज्ञान विषय में स्नातक (जीवविज्ञान, वानिकी, कृषि विज्ञान या पशु चिकित्सा विज्ञान), जिनकी उम्र 25 वर्ष से कम हो तथा स्नातक परीक्षा में कम से कम 55% अंक प्राप्त किये हों, पात्र हैं। ये पात्रतायें सौराष्ट्र विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित की गई हैं।

संस्थान में इस पाठ्यक्रम में चयनित होने वाले विद्यार्थियों को 1800 रुपये प्रतिमाह की छात्रवृत्ति, मुफ्त में छात्रावास की सुविधा तथा अन्य सुविधायें प्रदान की जाती हैं। इस प्रकार एक विद्यार्थी पर संस्थान लगभग रु0 2,30,000/– खर्च करता है। छात्रवृत्तियों की संख्या मात्र आठ होने के कारण वरीयता में अन्तिम दो (नौवें व दसवें) स्थान वाले अभ्यर्थियों को अपनी फीस (खर्चे) का प्रबन्ध स्वयं करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम में दो स्थान विदेशी छात्रों के लिए आरक्षित किये गये हैं। विदेशी छात्रों को शिक्षण शुल्क के रूप में 10,000/– अमरीकी डॉलर जमा करने होते हैं। अभी तक संस्थान से कुल 76 परास्नातक (वन्यजीव विज्ञान) उत्तीर्ण हो चुके हैं, जिनमें 72 भारतीय व 4 विदेशी (2 नेपाल, 1 श्रीलंका व 1 म्यांमार) हैं।

परास्नातक पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषतायें: यह पाठ्यक्रम मूलरूप से विद्यार्थियों को प्राकृतिक स्थलों को खोजने, वन्यजीव विज्ञान के पहलुओं पर गहन अध्ययन करने हेतु प्रोत्साहित करता है। दो वर्षों के अन्तराल में विद्यार्थी 4 सत्रों से गुजरते हैं। पहले तीन सत्रों में 10 प्रश्न–पत्र उत्तीर्ण करने होते हैं। इन प्रश्न–पत्रों के विषय व पाठ्यक्रम अत्यंत संतुलित रूप से प्रकृति, विज्ञान पारिस्थितिकी, जैव–भौगोलिकी, सांख्यिकी, वानिकी, वनस्पति, वर्गीकरण, प्राकृतवास, पारिस्थितिकी, वन्यजीव कार्यिकी, सामाजिक–मानव विज्ञान, वन्यजीव प्रबन्धन आदि से लेकर निर्धारित किये गये हैं।

वन्यजीव संरक्षण ऐसा क्षेत्र है, जिसमें जीव विज्ञान, तकनीकी, पारिस्थितिकी, विभिन्न अधिनियमों, कानूनों, सामाजिक–आर्थिक विज्ञान सांख्यिकी व आधुनिकतम जीन परीक्षण पद्धतियों को समझना होता है। अतः इस पाठ्यक्रम में विद्यार्थियों को न केवल विषयों पर विस्तार से पढ़ाया जाता है, बल्कि देश के विभिन्न संरक्षित क्षेत्रों व अन्य विशेषज्ञों के सम्पर्क में भी लाया जाता है। वैज्ञानिक लेख लिखने व शोधपत्रों का विश्लेषण भी कराया जाता है।

इस पाठ्यक्रम का एक महत्वपूर्ण भाग है– चौथे व अन्तिम सत्र में शोध के आधार पर एक ग्रन्थ (Dissertation) तैयार करना। हर विद्यार्थी को अनिवार्य रूप से छः माह तक किसी प्राकृतिक स्थल, राष्ट्रीय उद्यान या अभयारण्य में रहते हुए किसी भी संरक्षण संबंधी विषय पर शोध करना होता है। इस प्रक्रिया में विद्यार्थियों को एकत्रित आँकड़ों का निर्धारित मानकों के अनुसार विधिवत विश्लेषण करना, परिणामों की व्याख्या करना, रिपोर्ट (ग्रन्थ) लिखना तथा अन्त में बाहरी परीक्षकों तथा संस्थान के संकाय सदस्यों व शोध छात्रों के सम्मुख शोध परिणामों को प्रस्तुत करना सिखाया जाता है। उल्लेखनीय है कि अब तक जितने भी लघुशोध कराये गये हैं, सभी संरक्षण व वन्यजीव विज्ञान को अग्रसर करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुए हैं। लघु शोधों के परिणाम कई राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। संस्थान से उत्तीर्ण परास्नातक छात्र–छात्रायें आज देश–विदेश में वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिकायें निभा रहे हैं।

अन्त में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारतीय वन्यजीव संस्थान का परास्नातक पाठ्यक्रम न केवल इस देश में वन्यजीव विज्ञान को गति दे रहा है, अपितु वन्यजीव संरक्षण जैसे दुष्कर क्षेत्र में योगदान देने व समर्पित होने के लिए नई पीढ़ी को तैयार कर रहा है।

भारतीय वन्यजीव संस्थान का पुस्तकालय एवं प्रलेखन केन्द्र

यशपाल सिंह वर्मा

भा.व.सं., देहरादून

शिक्षण, प्रशिक्षण व शोध कार्य के लिए पुस्तकालयों का बहुत अधिक उपयोग होता है। मानव सभ्यता के विकास में भी पुस्तकालयों का एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पुस्तकालय मानव शिक्षा के लिए एक प्रबल शक्ति हैं। आज पुस्तकालय का कार्य, मात्र ज्ञान सामग्री का एकत्रीकरण व संरक्षण ही नहीं है, बल्कि उसका प्रचार एवं प्रसार करना भी है। मानव विकास के लिए केवल वैज्ञानिक एवम् तकनीकी अनुसंधान ही आवश्यक नहीं है, बल्कि इसके लिये पुस्तकालय से सूचनाओं को पाठकों तक पहुँचाने में पुस्तकालय का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। भरतीय वन्यजीव संस्थान में पुस्तकालय की स्थापना सन् 1986 में की गयी थी, उस समय पुस्तकालय में लगभग 2,500 ग्रन्थों का संग्रह था।

पुस्तकालयों के निम्न उद्देश्य हैं:

1. पाठक की रुचि के अनुसार पाठ्य सामग्री का संग्रह करना,
2. पाठकों को उनके स्वस्थ एवं बौद्धिक विकास के लिए पाठ्य एवं अन्य सूचनाप्रद सामग्री उपलब्ध कराना,
3. सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक मूल्यों का विकास करना,
4. समाज में ज्ञान प्रसार करना,
5. समस्त विषयों एवं सूचनाओं के साथ–साथ स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय विषयों से भी सम्बन्धित साहित्य का संग्रह एवं व्यवस्थापन करना।
6. खाली समय के लिए मनोरंजन से सम्बन्धित पाठ्य सामग्री प्रदान करना।
7. पाठकों, विशेषकर शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों को साहित्य एवं खोज के प्रति अवगत कराना।
8. इस प्रकार के ग्रन्थों का संग्रह करना, जो राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर साहित्य, खोज लेखन आदि के बारे में सूचनायें प्रदान करते हैं।

पुस्तकालय ज्ञान का एक ऐसा भण्डार है, जो राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का संरक्षण करता है, जिसमें उस राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर संग्रहीत होती है। यह साहित्य राष्ट्र की प्रगति में सहायक होता है। भारतीय वन्यजीव संस्थान का पुस्तकालय एक विशिष्ट पुस्तकालय की श्रेणी में आता है, जिसमें पाठकों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए निम्न प्रकार की पाठ्य–सामग्री का संग्रह किया गया है: 1. वैज्ञानिक खोजों पर साहित्य, 2. विभिन्न प्रकार के सन्दर्भ ग्रन्थ, 3. विभिन्न प्रकार के विश्वकोष, 4. विभिन्न प्रकार के शब्दकोष, 5. विभिन्न विषयों पर विभिन्न वैज्ञानिकों के शोधग्रन्थ, 6. विभिन्न विषयों पर विभिन्न वैज्ञानिकों के पुनर्मुद्रण पत्र, 7. विभिन्न विषयों पर भारत व विदेशों में संगोष्ठियों, सम्मेलनों से सम्बन्धित साहित्य, 8. देशी एवं विदेशी दैनिकी साहित्य

व समाचार पत्रिका, 9. विभिन्न राज्यों व विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित मानचित्र, एवं 10. बच्चों से सम्बन्धित साहित्य व कहानियों का संग्रह।

यह अनुभव किया जा रहा है कि त्वरित सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान के साथ–साथ सूचनाओं को उपभोक्ताओं तक शीघ्रता से पहुँचाना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पुस्तकालय तथा प्रलेखन केन्द्र, लक्षित अनुसंधान संगठनों के वैज्ञानिकों को सूचनायें प्रेषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। संस्थान के पुस्तकालय एवं प्रलेखन केन्द्र में लगभग 26,000 पुस्तकें, 20,600 समाचार पत्रों की कटिंग, 7,350 मानचित्र/स्थानीय मानचित्र एवं पुराने और दुर्लभ जॉर्नल्स के 6,225 से अधिक ज़िल्द किये गये अंक हैं। पुस्तकालय में 10,200 से अधिक वैज्ञानिक पेपरों का संग्रह है एवं 310 से अधिक पत्रिकायें मंगाई जाती हैं। 350 से अधिक ऑनलाइन जॉर्नल्स भी मंगाये जाते हैं।

भारतीय वन्यजीव संस्थान के पुस्तकालय में निम्नलिखित सेवायें प्रदान की जाती हैं:

1. खुली–व्यवस्था (Open access) होने के कारण किसी भी पाठक को पुस्तकालय की सेवा का भरपूर उपयोग करने का अधिकार है, जो पुस्तकालय का सदस्य हो,
2. सन्दर्भ सेवा,
3. डाटाबेस सेवा,
4. सामयिक अभिज्ञता सेवा,
5. समाचार–पत्र कतरन (क्लिपिंग) सेवा,
6. छाया प्रतिलिपि सेवा,
7. आन्तरिक पुस्तकालय आदान–प्रदान सेवा, व
8. पुस्तकालय में पाठकों का ध्यान रखते हुए वाचनालय कक्ष में हर प्रकार की (बैठने, स्वच्छ वातावरण आदि) सेवा प्रदान करना।

संस्थान में देश व विदेशों से आने वाले प्रतिभागियों के लिये वन्यजीवों से सम्बन्धित पाठ्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। यह सुचारू रूप से तभी सम्भव है, जब संस्थान का ग्रन्थालय उच्चस्तरीय हो।

पुस्तकालय पूर्ण रूप से कम्प्यूटरीकृत है। लिबसिस सॉफ्टवेयर पाठकों की सुविधा के लिए लगाया गया है। जिसके द्वारा पाठक स्वयं ही अपनी रुचि के अनुसार पाठ्य–सामग्री खोज सकता है इसमें निम्न वैकल्पिक मैन्यू उपलब्ध होते हैं:

1. अधिग्रहण/आदेश तकनीक,
2. प्रसूचिकरण तकनीक,
3. परिसंचरण तकनीक,
4. क्रमिक, धारावाही तकनीक, व
5. ओपैक

ओपैक के द्वारा पाठक स्वयं ही अपनी रुचि अनुसार शीर्षक, लेखक व वर्गांक के अनुसार साहित्य खोज सकता है। बुलियन खोज की भी सुविधा ओपैक में है, जिससे छोटे से छोटे विषय पर भी साहित्य खोजा जा सकता है।

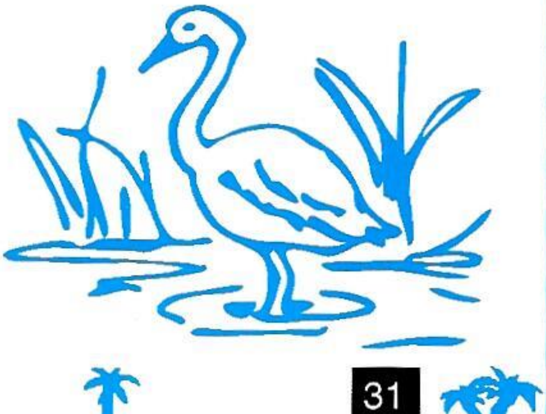

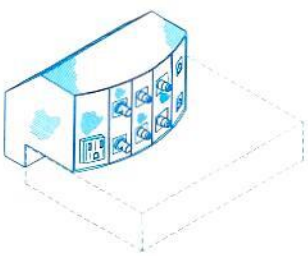

संस्थान में श्रव्य–दृभय एकक् का योगदान

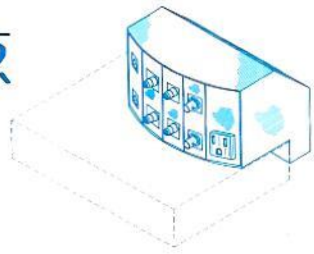

सैमुएल विल्सन
भा.व.सं., देहरादून

प्रायः ऐसा देखा गया है कि शरीर के विभिन्न स्नायुतंत्रों (Sense organs) का एक साथ प्रयोग किया जाये ,तो स्मरण अधिक तथा प्रभावशाली होता है। जैसे केवल सुनने के कुछ ही समय बाद हम बहुत कुछ भूल जाते हैं। मात्र 20% ही स्मरण रह पाता है। इसी प्रकार केवल देखने से मात्र 30–40% ही स्मरण रह पाता है। अगर दोनों को मिलाकर एक साथ देखा जाये तो वह अधिक समय तक तथा अधिक मात्रा में स्मरण रहता है। श्रव्य–दृश्य एक ऐसा आदेशात्मक यंत्र (Instructional device) है, जो सुना भी जा सकता है और देखा भी जा सकता है।

संस्थान के श्रव्य–दृश्य तथा वन्यजीव विस्तार प्रकोष्ठ द्वारा विभिन्न शैक्षिक क्रियाकलापों में योगदान दिया जाता है। प्रकोष्ठ द्वारा 16 एम0एम0 फिल्म, वीडियो फिल्म, समकालिक कार्यक्रम तथा कई अन्य श्रव्य–दृश्य उपकरणों का अनुरक्षण किया जाता है। प्रकोष्ठ द्वारा नौ प्रोजेक्टरों से सिंक्रोनाइज्ड कार्यक्रमों के शो विभिन्न अवसरों पर दिखाये जाते हैं। विभिन्न क्रियाकलापों के प्रिन्ट्स और निगेटिवों का प्रलेखीकरण किया गया। जब्त सामग्री के बारे में वन्यजीव अपराध विज्ञान प्रकोष्ठ को फोटोग्राफी में सहयोग दिया जाता है।

उद्देश्य

1. सही मूल्यों को दर्शाने में मदद करना, 2. ज्ञानार्जन में सहयोग प्रदान करना, 3. किये गये नये प्रयोगों को दूसरों तक पहुँचाना, 4. रुचि बढ़ाना, 5. जागरूक करना तथा मनोवृत्ति को बदलना, 6. विचारों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाना, 7. अध्यापन का समय बचाना।

संस्थान में डिप्लोमा व सर्टिफिकेट प्रक्षिणार्थियों तथा एम.एस.सी. के विद्यार्थियों के लिये तीन कक्षायें हैं। इन कक्षाओं में शिक्षा के आधुनिक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है ताकि शिक्षा विश्वस्तरीय हो सके। साथ ही बोर्ड रूम व पोर्टा केबिन में गोष्ठियाँ, कार्यशालायें व सेमिनार आदि होते रहते है। यहाँ पर भी पूर्ण रूप से उच्चस्तरीय कम्प्यूटरीकृत आधुनिक प्रशिक्षण के साधन उपलब्ध हैं। संस्थान में एक सभागार है, वहाँ भी कम्प्यूटर संचालित श्रव्य–दृश्य यंत्रों को लगाया गया है।

श्रव्य–दृश्य एकक् में एक फोटो लाइब्रेरी है। जहाँ पर खींचे गये चित्रों तथा स्लाइडों को संभालकर रखा गया है। यहाँ उपलब्ध फोटो विभिन्न प्रकाशनों मे छपते हैं तथा कक्षा में शिक्षण हेतु प्रयोग में लाये जाते हैं। एकक् में

कम्प्यूटरीकृत वीडियो एडिटिंग की सुविधा भी उपलब्ध है। वीडियो रिकार्डिंग को सम्पादित कर CD में बदल दिया जाता है। यह प्रकोष्ठ विभिन्न छोटी–बड़ी प्रदर्शनियों में भी भाग लेता है। श्रव्य–दृश्य प्रकोष्ठ संस्थान का एक मुख्य अंग है और भविष्य में भी इसी प्रकार अपने को आधुनिक सुविधाओं से संचालित करता रहेगा।

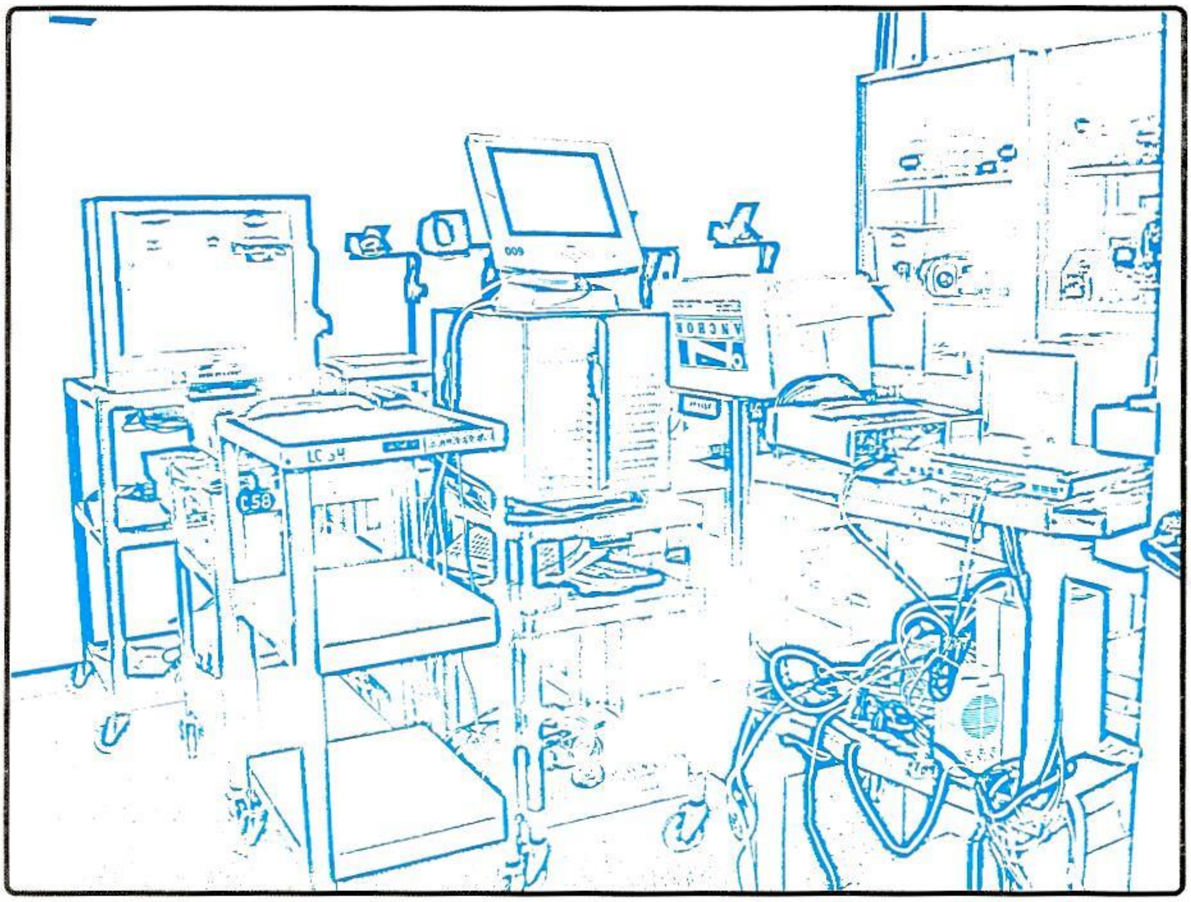

वन संरक्षण और उसकी आवश्यकता

यशपाल सिंह वर्मा
भा.व.सं., देहरादून

वन, अरण्य, जंगल, विपिन, कानन आदि सभी शब्द प्रकृति की एक ही अनुपम देन के अर्थ और स्वरूप को प्रकट करने वाले हैं। मानव का जन्म, उसकी सभ्यता और संस्कृति का विकास वन में ही हुआ था। उसकी खाद्य सामग्री आवास आदि सभी समस्याओं का समाधान वन करते थे। वेदों, उपनिषदों की रचना तो वनों में ही हुई। आरण्यक जैसे ज्ञान–विज्ञान के भण्डार माने जाने वाले महान ग्रन्थ भी अरण्यों यानि वनों में ही लिखे जाने के कारण आरण्यक कहलाए। आदिकाव्य रामायण भी महाकवि वाल्मिकी द्वारा वन में ही रचा गया था। विश्व की प्रत्येक सभ्यता–संस्कृति में वनों का अत्यधिक महत्व रहा है। इसका प्रमाण प्रत्येक भाषा के प्राचीनतम साहित्य में देखा जा सकता है। न केवल मानवीय सभ्यता–संस्कृति की रक्षा के लिए बल्कि प्राणियों की रक्षा के लिए व तरह–तरह की वनस्पतियों, औषधियों आदि की रक्षा के लिए वन संरक्षण आवश्यक समझा गया। वन तरह–तरह के पशु–पक्षियों की प्रजातियों के लिए एकमात्र आश्रय–स्थल थे और आज भी है।

आज जिस प्रकार की नवीन परिस्थितियाँ बन गई हैं, जिस तेजी से नए–नए कल–कारखानों, उद्योग धन्धों की स्थापना हो रही हैं, नए–नए अणु बमों का निर्माण और परीक्षण जारी है, जैविक शस्त्र बनाए जा रहे हैं, इन सभी से गैसों के निसरण से पर्यावरण अत्यधिक प्रदूषित हो गया है। केवल वन ही हैं, जो इस विषैले और मारक प्रभाव से प्राणी जगत की रक्षा कर सकते हैं। वनों के रहते ही समय पर उचित मात्रा में वर्षा होकर धरती की हरियाली बनी रह सकती है। सिंचाई और पेयजल की समस्या का समाधान भी वन संरक्षण से ही सम्भव हो सकता है। जिस दिन वन नहीं बचेंगें, तब सारी धरती वीरान, बंजर और रेगिस्तान बन जायेगी और धरती पर वास कर रही सभी तरह की प्राणी–जातियों का भी अंत हो जायेगा।

आज के वैज्ञानिक व पर्यावरण–विशेषज्ञ आदि वन–संरक्षण की बात जोर–शोर से कह रहे हैं। सरकार ने वन्य प्रजातियों की रक्षा के लिए कुछ अभ्यारण्य बनाए हैं। जिस प्रकार बच्चों की देखरेख की आवश्यकता बालिग होने तक जरूरी है, उसी प्रकार वन उगाने, उनका संरक्षण करने के लिए भी है। प्रत्येक मनुष्य में जब तक वनों, पेड़ों के प्रति प्यार का अभाव रहेगा तब तक हम पर्यावरण की सुरक्षा नहीं कर सकते हैं। यदि हम चाहते हैं कि धरती हरी–भरी रहे, नदियाँ अमृत जलधारा बहाती रहें और सबसे बढ़कर मानवता की रक्षा हो सके, तो हमें पेड़–पौधों को उगाना और संरक्षित करना चाहिए, अन्य कोई उपाय नहीं है।

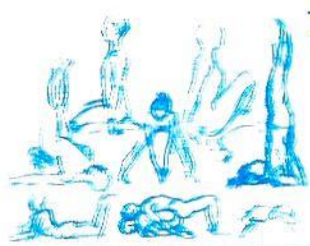

शारीरिक आरोग्यता एवं योग साधना – शास्त्रोक दृष्टि

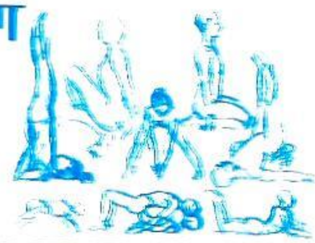

हीराबल्लभ जोशी एवं बाबूराम शर्मा
भारतीय वन सर्वेक्षण, देहरादून

हमारे प्राच्य सद्ग्रन्थ वेद, उपनिषद, आयुर्वेदशास्त्र आदि में सुख–शान्तिमय जीवन जीने तथा शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक स्वच्छता एवं विकास हेतु ईश्वर की देन मनुष्य शरीर को निरोग, स्वच्छ, स्वस्थ, विकारमुक्त, पुष्ट और बलवान बनाये रखने एवं सदुपयोग करने पर बल दिया है।

धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष के द्वारा मानव जीवन की सार्थकता प्राप्त करने का श्रेष्ठ साधन शारीरिक आरोग्यता ही है। बिना शारीरिक आरोग्यता के कुछ भी संभव नहीं। मानव शरीर प्रकृति के पंचतत्वों, प्रकृतिजन्य तीन गुण–दोष सत्व, रज और तम तथा शरीर में स्थित तीन विकार कफ, पित्त और वात के अनुपात में अन्तर आने से शरीर रोगग्रस्त होता है और चिकित्सा, औषधि रोग निदान का केवल मात्र उपाय है।

रोग के संबंध में होम्योपैथिक चिकित्सक हेनीमन ने कहा है – रोग, सबसे पहले मन में आता है, उसके बाद शरीर में आता है। महर्षि चरक ने स्वस्थ रहने में मन को प्रधान माना है। अतः मन को स्वच्छ, विकाररहित तथा स्वस्थ बनाये रखना शारीरिक आरोग्यता व सुखद जीवन के लिये आवश्यक है। यह भी कहा गया है कि बीमारी, प्रकृति के नियमों के प्रति लापरवाही बरतने से पैदा होती है, अतः नियमों का पालन न करना रोग का मुख्य कारण है।

शरीर के पोषण के लिये आहार की आवश्यकता होती है और वही आहार, मन, बुद्धि और इन्द्रियों को भी पोषण देता है। मन की अनूकूलता प्रतिकूलता पर आहार का विशेष प्रभाव पड़ता है अतः मन निश्चित रूप से अन्नाहार से प्रभावित होता है। कश्यप संहिता में आहार के संबंध में ऐसा कहा गया है कि तृप्ति, पोषण, धैर्य, बुद्धि, उत्साह, पौरूष, उत्तम स्वर, ओज, तेज, प्रतिभा और प्रभादि गुण, आहार से तभी उत्पन्न होते हैं, जब इसे उचित मात्रा में ग्रहण किया जाये, किन्तु जब वही आहार अयुक्ति, अविधि, उदर, क्षमता पाचन शक्ति के विरुद्ध, अधिक मात्रा में, रसास्वादन हेतु सेवन किया जाता है, तो वही रोग का कारण भी बन जाता है। मन की प्रकृति (स्वभाव) चंचल है, यह प्राण की गति के समान चलता है, प्राण की गति को कम करना उसमें योगाभ्यास द्वारा नियंत्रण करने से चित्त (मन) ठहर जाता है। मन के निरोध के केवल दो ही उपाय हैं: (1) प्राणायाम (2) ध्यान।

चित्त (मन) का स्वभाव चंचल है और जीवात्मा के गुण इच्छा, प्रयत्न, पुरुषार्थ, जीवन कार्य, निर्वाह, स्मरण, क्षुधा, तृष्णा, इन्द्रियों का चलाना, सुख–दुःखादि संकल्प–विकल्प है। कर्मशील पुरुष का चित्त और इन्द्रियाँ बहिर्मुखी होने

तथा विषयों में आनन्द व रुचि लेने के कारण प्रभावित होता है। अतः जीवन के कल्याण तथा अपने स्वरूप की पहचान के लिये चित्त की बहिर्मुखी आत्मा में संयुक्त कर देना चाहिये। जिससे जीव को अपने स्वरूप का ज्ञान आत्मानुभूति तथा स्थायी शान्ति प्राप्त हो सके। जब तक मनुष्य का चित्त चलायमान है और इन्द्रियाँ विषयों को ग्रहण करने वाली व स्वच्छन्द हैं, तब तक जीव को स्थायी सुख–शान्ति संभव नहीं। अतः चित्तवृत्तियों का निरोध और इन्द्रियों का दमन मनुष्य के अपने कल्याण के लिये परम आवश्यक है। महर्षि चरक ने अपने रचित ग्रन्थ चरक संहिता में निरोग के संबंध में ऐसा कहते हैं – *ज्ञान तपः तत्परता च योगे यस्यास्ति तं नानुतपन्ति रोगाः* अर्थात् जो मनुष्य ज्ञानवान है, जो तपस्वी है व संयमी हैं और जो प्राणायाम व योगाभ्यास में सदा तत्पर रहते हैं, उनको कभी भी रोग नहीं सताते। वे निरोगी रहते हैं।

मनुष्य का सूक्ष्म शरीर, कभी नष्ट नहीं होता। सूक्ष्म शरीर में चित्त होता है, उसमें तीन चीजें होती हैः (1) स्मृति, (2) वासना, व (3) संस्कार। प्राचीन ऋषि–मुनि, शरीर विज्ञानी एवं योगाचार्यों द्वारा अनूभत ज्ञान का लाभ उठाकर योग साधना में प्रवृत्त हो योगाभ्यास साधन द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ, पुष्ट तथा विकाररहित बनाने का प्रयास करें, जिससे मानव को अपने जीवन का अंतिम लक्ष्य, मोक्ष प्राप्त हो सके।

वृक्ष

नियमित करते तरु प्रकृति को,
मेघों को मोहित करते हैं।
रिमझिम स्वर में शीतल बूंदें,
नवजीवन हमको देते हैं।

भूख–प्यास से व्याकुल प्राणी,
गर्मी से मन अकुलाता है।
तरु आँचल के नीचे आकर,
वह भारी राहत पाता है ।

कीट–पतंगे और पशु–पक्षीगण,
विकलमना हो जाते हैं।
हरा–भरा वृक्ष जब निर्ममता से,
पड़ा धरा पर पाते हैं।

विकास नाम है अंधी दौड़ का,
जिसने वृक्षों को लील लिया।
प्राकृतिक सुषमा को क्षति पहुँचाकर,
वातावरण अब डोल गया।

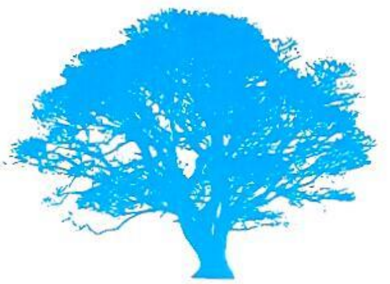

उजड़ा उपवन सूनी सड़कें,
धूल सनी ये खूनी बयार।
तपती धरती दहका सूरज,
प्रदूषणयुक्त हुआ संसार।

करने पर्यावरण संरक्षण, संवर्धन,
घर आँगन बहु–वृक्ष लगायें।
रोग–प्रकोप को दूर भगाने,
मिलजुल कर पर्यावरण बचायें ।

दंभी मानव नहीं चेता तो,
प्रकृति दण्ड अवश्य देगी।
विकृत स्वरूप देने के बदले,
वह प्राणों को हर लेगी।

समय नहीं है, जरा विचारें,
वृक्षविहीन वह रेगिस्तान।
अपनी भावी पीढ़ी को देना,
चाहोगे अपनी कैसी पहचान।

भुवन चन्द्र उपाध्याय
मा.व.सं., देहरादून

वन्यजीवों से हमारा सम्बन्ध एवं सुरक्षा के उपाय

भुवन चन्द्र उपाध्याय
भा.व.सं., देहरादून

यह तथ्य श्री शिव महापुराण में उल्लिखित है कि नित्य सत् एवं असत् स्वरूप प्रधान पुरूष परमात्मा ही ब्रम्हा बनकर सृष्टि उत्पन्न किया करते हैं। भगवान ने जल, आकाश और पृथ्वी रची, जिसके मध्य चौदह भुवनों की रचना की। जल से ऊपर पृथ्वी रची। फिर सृष्टि विस्तार हेतु अपनी प्रजा रची। इस प्रजा से सृष्टि विस्तार कार्य करवाया। इनकी प्रजा से सुर–असुर, मनुष्य, वृक्ष, सर्प, दो–चार व कई पैर वाले चर–अचर उत्पन्न किए। अण्डे से उत्पन्न होने वाले पक्षी एवं जीव–जन्तु भी उत्पन्न हुए। श्रीमद् भगवद्गीता भी यही कहती है कि अपनी त्रिगुणमयी माया को अंगीकार कर स्वभाव के वश से परतन्त्र हुए इस सम्पूर्ण भूत समुदाय को बारम्बार (उनके कर्मानुसार) रचता हूँ, अर्थात् यह संसार आवागमन रूपी चक्र में घूमता है।

श्री रामायण के अनुसार त्रेता युग में मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम ने अपने पिता राजा दशरथ के मित्र जटायु (पक्षी) को तात् शब्द से सम्बोधित किया। जटायु द्वारा प्राण–विसर्जन पर उनका अन्तिम दाह–संस्कार पुत्र की भाँति स्वयं श्रीराम ने किया। वानर सुग्रीव को मित्र व वानर हनुमान को 'तुम मम भरत सम भाई' कहकर सम्बोधित किया। द्वापर में श्रीकृष्ण ने जामवन्त रीछ की पुत्री जामवन्ती को अपनी रानी बनाकर जामवन्त को त्रेता युग में श्रीराम रूप में दिया गया वचन पूर्ण किया (सिद्ध हुआ कि इनसे मानव जाति का निकट व गहरा रिश्ता रहा है)।

संसार में कोई भी जीव तुच्छ नहीं है, तुच्छ तो हमारी दृष्टि है। विचार करें यदि जीव तुच्छ होता, तो शेष शैय्या पर विराजमान कमलनेत्र लक्ष्मीपति भगवान विष्णु ने अपने विभिन्न अवतारों में मत्स्य, वराह, नृसिंह और कच्छप रूप धारण कर जगत हित कार्य क्यों किया होता? भगवान शिव ने अपने तन पर सर्प आभूषण स्वीकार न किया होता। अन्य पशु हमारे शत्रु व गाय देवों व मानवों की माता कैसे हो गयी? क्या वह परमात्मा, मात्र मानवों का ही पिता है? अन्य जीवों का कोई अन्य? भगवान शिव ने अपने पुत्र श्री गणेश का मस्तक गज सीस से सुशोभित किया। वास्तव में इसके पीछे विश्व के लिये आदर्श संदेश है – समस्त सृष्टि को सम्मान देना, उनकी महत्ता को स्वीकारना।

वन्यजीव, हम मानवों की भाँति दैवीय गुणों के अधीन होकर निरंतर सृष्टि कार्य में संलग्न हैं। दैवीय गुणों के अनुरूप कुछ वन्यजीव हिंसक होते हुए भी निर्दोष हैं, उनके यही गुण प्राणी जीवन व प्रकृति संतुलन का आधार भी है, उन्हें भी अपनी क्षुधा शान्त करने के लिए अपनी–अपनी योनियों के अनुसार प्रकृतिजन्य कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। वनराज जब अपने प्राकृतिक कौशल से अन्य वन्यजीवों का

शिकार करता है, तब उसके इस परिश्रम का फल उसके साथ–साथ उसी तरह के अन्य मांसभक्षियों को भी मिलता है, ठीक उसी प्रकार नाना प्रकार के वृक्षों पर उत्पन्न नाना प्रकार के फलों का रसास्वादन करते वक्त पक्षीगणों और बन्दरों द्वारा गिराये गये फलों का सेवन अन्य थलचर पशु करते है।

सभी प्रकार के जीवों की कुलवृद्वि अनवरत आगे चलती रहे, इस हेतु जीवों में परस्पर मद–मादक आकर्षण कला से उन्हें पूर्ण किया है। पशु–पक्षी अपनी मनोहर नृत्य कला से, मधुर वाणी से, गंभीर गर्जना से, अपने चमकदार रंग के पंखों से विभिन्न प्रकार की बोली को यथावत् स्वर में प्रस्तुत करने की गुण क्षमता से, गठीले हष्ट–पुष्ट शरीर प्रदर्शन से सींग व दाँतों से, चमकदार घने बालों और पूँछ से, सुन्दर सलोनी आँखों से परस्पर एक दूसरे को अपने प्रति सम्मोहित करते हैं यह गुण उन जैसे जीवों की पुनः उत्पत्ति के कारक हैं। इस प्रकार प्रकृति रूपी देवी (अर्थात्) विष्णु की योगमाया सभी जीवों का भरण–पोषण और सम्मोहन कर, संसार को निरंतर आगे बढ़ाने का दायित्व संभाले हुए है। समस्त जीवों का जीवों से, वनस्पतियों से पंच महाभूतों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध जुड़ा है। प्रत्येक जीव का जीवन, संसार के लिए अमूल्य धरोहर है, जिसे संवारने और सुरक्षा देने की आवश्यकता है। यह संसार संतुलित रूप से सभी प्रकार के तत्वों के मिश्रण से बना है, इसमें कोई भी वस्तु अनुपयोगी नहीं।

वर्तमान में कुछ स्वार्थी तत्वों द्वारा वन्यजीवों की अकाल मौत, गहन राष्ट्रीय चिन्ता का विषय बन गया है। इनके बेशकीमती दाँत, खाल, नाखून, माँस और कस्तूरी इत्यादि उनके प्राणहरण का मुख्य कारण बन गये हैं। निरपराध वन्यजीवों के जघन्य वध की घोर अमानवीय एवम् तामसी प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है। पथभ्रमित दुर्जन इसमें अपने सुख की अभिलाषा रख इस प्रकार के अर्जित धन से अपने आश्रितों को दुःखों का भण्डार देते है।

वन्यजीव यदि मानव आबादी में प्रवेश कर मानव का शिकार करता है, तो उसे मृत्युदण्ड मिलता है और प्रभावित व्यक्ति के परिजनों को मुआवजा दिलाने की प्रत्येक स्तर पर कार्यवाही होती है। लेकिन यदि कोई मानव वन्य प्रदेश में जाकर निरपराध वन्यजीव का वध अपने स्वार्थ के लिए करता है, तो उसके लिए मृत्युदण्ड का प्रावधान नहीं। पर–पीर को गहराई से समझने वाला ही इन्सान है, विद्वान है। भागवत धर्म का आचरण है, न आप दुःखी हों न दूसरों के दुःख का निमित्त बनें, अर्थात् जियो और जीने दो की परिकल्पना है। हमारी सरकारें इन वन्यजीवों की सुरक्षा के उपायों हेतु करोड़ों रूपये व्यय करती आ रहीं हैं, लेकिन परिणाम संतोषजनक नहीं मिले। वन्यप्राणियों की संख्या में वृद्धि के बजाय निरंतर ह्रास आ रहा है, संभवतः जिसके मुख्य कारण अपेक्षित जन सहयोग व जागृति का अभाव, अपर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था व पुरस्कार, अपेक्षित कड़े कूननों का अभाव, न्याय में विलम्ब हैं। जिसका लाभ अन्ततः अपराधियों को मिलता है। इसके लिए चिरनिद्रा में पड़ी अनभिज्ञ जनशक्ति को जागृत करना होगा, प्रत्येक राष्ट्र का राष्ट्रीय कार्य तब तक पूर्ण सफल नहीं होता, जब तक उसमें उस राष्ट्र की जनशक्ति का भी अपेक्षित सहयोग, समर्थन व समर्पित भाव सम्मिलित नहीं होता, इसके लिए जन

सामान्य से हर स्तर पर संवाद, अपेक्षित सहयोग देने व लेने का वातावरण तैयार करना होगा। यह कैसी विडम्बना है कि भारत जैसे सभ्य राष्ट्र में हमारे वन्यजीव सुरक्षित नहीं हैं। कुछ प्रजातियाँ लुप्त होने के कगार पर हैं।

निज स्वार्थ की पूर्ति के लिए विकास के नाम पर हमने मानसून की दशा व दिशा तय करने वाले लहलहाते आच्छादित सुगन्धित व सुरम्य सुन्दर विशाल रमणीय वनों को बेदर्दी से काट डाला है, इस प्रकार प्राकृतिक वास स्थलों के विखंडन से पशु–पक्षियों, सरीसृपों, कीट–पतंगों आदि का अस्तित्व खतरें में पड़ता जा रहा है। इन परिस्थितियों में राष्ट्र को सुखी समृद्ध करने वाले ये जीव निवास करें तो कहाँ? अबोध वन्यजीव मानव आबादी की ओर अग्रसर हो फसल क्षति करते हैं। जहाँ उनका आखेट भी हो जाता है। वन क्षेत्रों का इस प्रकार विखंडन न मानवों के लिए, न पशुओं के लिए शुभ संकेत है। घने वन वर्षा को आमन्त्रित कर हमारी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करते हैं, राष्ट्र के कुछ राज्यों में पानी के अभाव ने वहाँ के कृषकों को (जो हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं) आत्महत्या करने के लिए विवश कर दिया। पंच भौतिक तत्व पृथ्वी, आकाश, वायु, तेज, जल जो समस्त प्राणियों में प्राणों का संचार कर उन्हें पुष्ट करते हैं, इनके दूषित हो जाने पर संसार की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। जो कई प्रकार के रोग उत्पन्न कर जड़–चेतन को समाप्त कर देते हैं, क्योंकि ऋतुचक्र अनियमित हो जाते हैं। इस ओर भी हमें मिलकर यह प्रयास करना होगा कि यह विश्व संरक्षण हेतु प्राकृतिक सम्पदा (जो वरदान है), समस्त जीवन हित में सतत् उपयोग हेतु, जब तक यह धरा स्थित है, स्वस्थ व स्वच्छ बनी रहे, ताकि समस्त प्राणियों की कुलवृद्धि सृष्टि के अन्त तक चलती रहे।

हमारे राष्ट्रीय वैभव के परिचायक वन्य जीवों के महत्व को नाकारा नहीं जा सकता इनसे राष्ट्र के पर्यटन उद्योग को बढ़ावा मिलता है, जो राष्ट्र का एक स्रोत है नागरिकों के लिए व्यवसाय व रोजगार के कपाट खुलने के अवसर मिलते है इन स्रोतों से होने वाली आय से सरकार राष्ट्रीय परियोजनाओं का खाका तैयार कर उसे संचलित करती है रमणीय स्थलों में वन्यजीवों की एक झलक देखकर हमारे भाई–बहिन पर्यटकों को जो सुख, संतुष्टि व तृप्ति प्राप्त होती है उसकी शब्दों में जितनी सराहना करें कम है । पर्यटक जब अपने राष्ट्र की ओर उन्मुख होते हैं तो अपने राष्ट्र के सम्मुख यहाँ की कुछ खट्टी कुछ मीठी यादों के साथ–साथ यहाँ के वैभव एवं भद्रता की प्रशंसा करते हैं, जिससे विश्व में राष्ट्र की कीर्ति में वृद्धि होती है ।

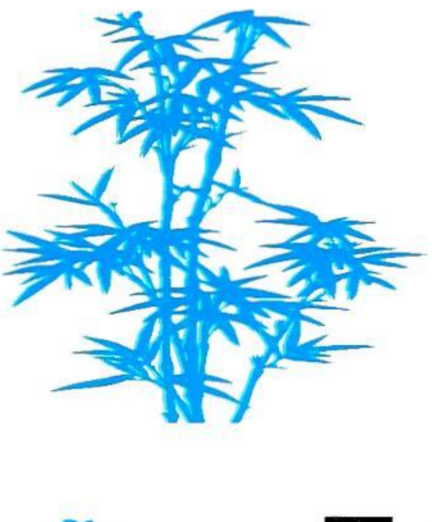

अपने उत्तराखण्ड को पहिचानें

नवीन चन्द्र काण्डपाल
भा.वं.सं., देहरादून

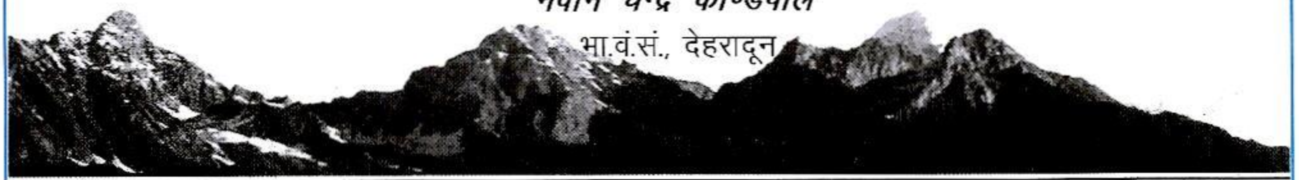

गढ़वाल–कुमाऊँ का भू–भाग सन् 1815 में अंग्रेज–गोरखा युद्ध के बाद अंग्रेजों ने ले लिया और 1856 में इसे अवध प्रान्त से जोड़ा गया। बाद में 1901 में कुछ प्रान्तों को मिलाकर जो प्रान्त बना, आजादी के बाद उत्तर प्रदेश कहलाया। उत्तर प्रदेश से अलग उत्तराँचल राज्य का निर्माण 9, नवम्बर 2000 को हुआ तथा 2 मई, 2001 को भारत सरकार द्वारा उत्तराँचल को विशेष राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।

उत्तराखण्ड राज्य की राजधानी देहरादून हिमालय की तलहटी में बसी पर्वतों और नदियों से घिरी दून घाटी, मसूरी और चकरौता का प्रवेश द्वार, पूर्व में गंगा की धारा, पश्चिम में यमुना का पानी, उत्तर में महादेव का स्थान और दक्षिण में देश की राजधानी है। हिमालय, शिवालिक घाटी की वादियों में फैली चारों और हरियाली, इस घाटी की सुन्दर छटा निराली है। जिसका प्रकृति की धरोहर के रूप में जंगलों से सम्बन्ध है। घने जंगलों में अधिक वन्यजीव पाये जाते हैं, हिमालय का यह क्षेत्र वन्यजीव व पक्षियों के लिये भारत में प्रसिद्ध है। वनों में मानव के हस्तक्षेप के कारण वन्यजीवों पर ख़तरा बढ़ता जा रहा है। वन्यजीवों पर बढ़ रहे ख़तरों को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा इनके संरक्षण के लिए उत्तराखण्ड में राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव विहार तथा सुरक्षित वनों का विकास किया गया है। राष्ट्रीय उद्यानों में कार्बेट नेशनल पार्क देश का सबसे पुराना पार्क है। यह पार्क गढ़वाल और कुमाऊँ में रामगंगा नदी के साथ–साथ फैला है। जिसकी शोभा साल के ऊँचे–ऊँचे वृक्ष और लम्बी–लम्बी घास बढ़ाती है, इस पार्क में आप हाथी, शेर, भालू, नीलगाय, सांभर, चीतल, आदि को खुले में घूमते हुए देख सकते हैं। अलौकिक साल के सुन्दर वन, चिड़ियों के चहकने से पुलकित मन, पंक्तियों मे चलता हाथियों का झुण्ड, भयमुक्त शेरों का दहाड़ना, दहाड़ने की आवाज़ सुनकर चीतल, सांभर, नीलगाय आदि का भागना, यह सब प्राकृतिक छवि को अपने कैमरे से उतारने वालों के लिये बहुत भाता है।

घूमने के लिये 15 जून के आसपास ठीक समय है। गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान, उत्तरकाशी, राजाजी राष्ट्रीय उद्यान, देहरादून, हरिद्वार, नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान, चमोली, गोविन्द राष्ट्रीय उद्यान, उत्तरकाशी तथा फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान, केदारनाथ वन्यजीव विहार, चमोली, अस्कोट वन्यजीव विहार, पिथौरागढ़, सोनानदी वन्यजीव विहार, गढ़वाल तथा बिनसर वन्यजीव विहार, अल्मोड़ा तथा मसूरी वन्यजीव विहार आदि वन्यजीवों के संरक्षण के लिये बनाये गये हैं।

एक ओर उत्तराखण्ड के तराई भाभर में हाथी, बाघ, हिरन आदि जानवरों की जातियाँ पायी जाती हैं। वहीं ऊँचाई वाले क्षेत्र में कस्तूरी मृग, स्नो लैपर्ड, घुरल, भालू आदि भी पाये जाते हैं। इनके संरक्षण के लिए भारतीय वन्यजीव संस्थान, बराबर इन पर शोध कार्य करता है। प्रकृति की गोद में फैले मीलों लम्बे जंगल और ग्लेशियर को पार करने पर हमें फूलों की घाटी के दर्शन होते हैं। इसकी सुन्दरता यूरोप के स्विट्ज़रलैण्ड की प्रकृति का मुकाबला करती है। यहाँ पर सैकड़ों तरह के फूल वायु को सुगन्धित करते हैं। उत्तराखण्ड में 6 नेशनल पार्क तथा 6 वन्यजीव अभ्यारण्य हैं।

भौगोलिक क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तराखण्ड की वनभूमि 2,425 हजार हैक्टेयर थी । 13 प्रतिशत सीढ़ीनुमा भूमि खेती के योग्य थी । वन विनाश में मानव हस्तक्षेपों के कारण वनों का स्तर घटता जा रहा है एवं वायु प्रदूषण बढ़ गया है जिस कारण भारत में राष्ट्रीय उद्यान की संख्या 97 है तथा वन्यजीव अभ्यारण्य 508 हैं ।

बीमारी से सब घिर रहे हैं। लगातार बढ़ रहे प्रदूषण और आबादी, हमारे पर्यावरण के लिए सबसे बड़ा ख़तरा बनते जा रहे हैं। एक तरफ ग्लोबल वार्मिंग हमारे लिए सबसे बड़ी समस्या है, दूसरी ओर विकास के नाम पर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले उत्पादों पर रोक नहीं लगा पा रहे हैं। यदि इस अभियान को प्राथमिकता के तौर पर शुरू करें और जन–जन को इसके प्रति सचेत करे तो निश्चित ही लोगों को जागरूक कर इसे बचाने के प्रयास सफल हो सकते हैं।

पीपल का पेड़

प्यारचन्द सिंह असवाल,

भा.व.सं., देहरादून

पीपल का पेड़ पर्यावरण की दृष्टि से शुद्ध वायु के लिए उपयुक्त माना गया है। अंधविश्वास के कारण बदनाम भी हुआ है। एक बार एक आदमी अपने गाँव गया, जब वह गाड़ी से नीचे उतरा, तो गाँव के लोग उससे कहने लगे कि इस पीपल के पेड़ में भूत हैं। उस आदमी ने विश्वास नहीं किया कि उस पेड़ में भूत है, गाँववालों में से एक ने फिर कहा, अच्छा, अगर तुम्हें विश्वास नहीं है, तो आज रात 12 बजे तुम पीपल के पेड़ के पास थोड़ी देर बैठना, लेटना या कुछ चीज पेड़ में लगाना, उस आदमी ने ऐसा ही किया, वह रात को 12 बजे एक कील लेकर पीपल के पेड़ के पास पहुँचा और कील पेड़ में गाड़ने लगा, वह कील ठोकता गया, जब वह उठा, तो उठ नहीं पा रहा था। उसने उठने की कोशिश की, पर वह उठ नहीं पाया ।

अगले दिन बस से एक आदमी नीचे उतरा और पीपल के पेड़ के पास गया, उसने देखा कि एक आदमी बेहोश पड़ा है। उसे जगाकर पूछा तुम बेहोश कैसे हुए ? उसने कहा मुझे भूत ने पकड़ रखा है, इसलिए मैं उठ नहीं पा रहा हूं। उस आदमी ने कहा, भाई साहब भूत ने नहीं कील ने आपकी कमीज को पकड़ रखा है, आप कैसे उठोगे ?

पर्यावरण की सुरक्षा

धर्म सिंह
भा.वं.सं., देहरादून

पर्यावरण की सुरक्षा करना हमारा धर्म है। पेड़ों से हमें शुद्ध ऑक्सीजन, भोजन, जल, ईंधन, खाद आदि प्राप्त होता है। प्राणियों से हमें भोजन, दूध, सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री रेशम, मोम, औषधियाँ आदि प्राप्त होती हैं। प्राणियों की उपयोगिता के आधार पर इनके जीवन को ख़तरा अधिक हो गया है। इनके विलुप्त होने की सम्भावनायें बढ़ रही हैं, इसलिये इनके संरक्षण की अब अधिक आवश्यकता है।

मनुष्य की सम्पन्नता एवं विकास में पौधों का महत्वपूर्ण स्थान है, इसलिये यह आवश्यक है कि पौधों की उचित देखभाल की जाये। हमें प्राकृतिक सम्पदा का उपयोग इस प्रकार करना चाहिये कि प्राकृतिक सन्तुलन बना रहे। हमें पेड़ अधिक से अधिक मात्रा में लगाने चाहिये। हमारे देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये आवास तथा कृषि के लिये जमीन प्राप्त करने के लिये लगातार वनों का विनाश किया जा रहा है। आग से वनों की सुरक्षा की जानी चाहिये। वन्यजीवों की रक्षा के लिये जंगलों की सुरक्षा आवश्यक है। हम जितने पेड़ काटें, उतने नये पेड़ अवश्य लगायें। अन्यथा प्रकृति सन्तुलन बिगड़ जायेगा और हमारा अस्तित्व ख़तरे में पड़ जायेगा। हमें खाली पड़ी बंजर भूमि में पौधे लगाने चाहिये। नहर तथा सड़कों के दाँये–बाँयें पेड़ लगाने चाहिये और खेत खलिहान घर आँगन में भी पेड़ लगाने चाहिये। प्राकृतिक सन्तुलन में प्रत्येक वन्यजीव की अहम् भूमिका निर्धारित है। पक्षी भी उनमें से एक है। ऐसा अनुमान है कि यदि संसार से चिड़िया समूल नष्ट कर दी गई, तो कीड़े–मकोड़े इतने बढ़ जायेंगे कि वे दस वर्षों में विश्व से वनस्पति को नष्ट कर देंगे। वनस्पति के बिना मानव जीवन की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

पेड़ व वन्यजीवों पर संकट

उत्तराखण्ड राज्य के लगभग 64 प्रतिशत से अधिक भू–भाग पर जंगल है। कुल वनभूमि के 46 प्रतिशत भाग में राष्ट्रीय वन, उद्यान और वन्यजीव अभ्यारण्य हैं। इनमें कई दुर्लभ जाति के जानवर विचरण करते हैं। विलुप्ति की कगार पर पहुँच चुकी प्रजातियाँ, जिनमें मोनाल, कस्तूरी मृग, स्नो लैपर्ड, भूरा भालू आदि प्रमुख हैं। यहाँ पर सर्दियों के मौसम में ऊँचाई वाले स्थानों पर बर्फ गिरने के कारण जंगली जानवरों का पलायन भी कम ऊँचाई वाले स्थानों पर होता है। यही समय होता है, जब यहाँ पर शिकारियों का दल भी अति सक्रिय हो जाता है। न जाने कितने वन्यप्राणियों का अब तक शिकारियों के द्वारा शिकार हो चुका होगा?

बाढ़ व सूखे का विनाशकारी प्रभाव

पर्यावरण विनाश का बाढ़ व सूखे पर बहुत प्रभाव पड़ता है। बारिश बहुत ही अनिश्चित होती है। बारिश मानसून के चार महीनों, जून से सितम्बर में होती है। इन महीनों में भी

बारिश सब जगह समय पर नहीं होती है। अकाल व बाढ़ की खबर समाचार पत्रों में एक साथ छपती हैं। प्रतिवर्ष आसाम, बंगाल, बिहार, जैसे कई प्रदेश बाढ़ की चपेट में रहते हैं। भारत के कई क्षेत्रों में सूखे का प्रभाव भी रहता है। इस संदर्भ में व्यापक जागरूकता व योजना बनाने की आवश्यकता है। भूमिगत जल का स्तर नीचे गिरता जा रहा है। यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया, तो स्थिति और भी विकट हो सकती है। भूमिगत जलस्तर को बढ़ाने की तकनीक वर्षा जल संग्रहण कहलाती है। इसमें वर्षा के जल को रोकने व इकट्ठा करने के लिए विशेष ढाँचों, जैसे कुएं गढ्ढे आदि का निर्माण करना चाहिये। हमें जल की बर्बादी पर रोक लगानी चाहिये। पेड़ लगाना आज की पहली जरूरत है। बड़ी संख्या में तालाब और पोखर बनाने की योजना की तत्काल ज़रूरत है। तभी हम इस संकट से उबर सकते हैं।

राष्ट्रीय उद्यान

राष्ट्रीय उद्यान में पाये जाने वाले पक्षियों में अधिकाँश प्रवासी पक्षी होते हैं। जो सुदूर राष्ट्रों से मुख्य रूप से यूरोपीय और उत्तरी ध्रुव तटों से प्रतिवर्ष जाड़ों का मौसम बिताने यहाँ आते हैं। जाड़े की ऋतु आते ही जब दिन की लम्बाई घटने से पक्षियों को भोजन जुटाने का समय कम पड़ने लगता है और पानी जमकर बर्फ बन जाता है तब ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों एवं दूर तटीय क्षेत्रों में रहने वाले पक्षी गर्म जलवायु वाले मैदानों की ओर जाड़ा बिताने के लिये निकल पड़ते हैं।

इसी क्रम में जाड़ा समाप्त होते ही जब इनके जन्मस्थानों में बर्फ पिघलने और धरती की गोद से अण्डे फूटने का समय लौटता है, तब यह पक्षी भी परिवार के साथ लौट पड़ते हैं। अपने वतन से सैकड़ों, हज़ारों किलोमीटर दूर घोंसला बनाकर नयी पीढ़ी को जन्म देने के लिये यह प्रवासी पक्षी वर्ष के तीन–चार माह ही अपने जन्मस्थलों (ब्रीडिंग ग्राउण्ड) पर बिताते हैं। ये अण्डे देकर बच्चे पालने प्रतिवर्ष लौटकर वहाँ जाते हैं। मातृभूमि का यह उत्कट प्रेम अदभुत् है। मार्ग में कितनी ही बाधायें आयें, कितनी तेज हवाओं में इन्हें वापसी की लम्बी यात्रा तय करनी पड़े, किन्तु किसी भी दशा में प्रवासी पक्षियों के परिवार अण्डे देने स्वदेश ही जायेगें। कुछ पक्षी राष्ट्रीय पार्क में ही अण्डे देकर, बच्चों को जन्म देकर उड़ने तक बच्चों के साथ रहते हैं। प्रवासी पक्षी किस प्रकार उड़ते हुए पूर्व निश्चित स्थल पर जा पहुँचते हैं, इसे प्रकृति का रहस्य कहा जा सकता है।

हम सब मिलकर इस पर्यावरण पर विचार करें और संकल्प लें कि हम पर्यावरण के लिये खाली समय में कुछ ज़रूर करें। यही हमारा नारा है, यही हमारा उददेश्य है।

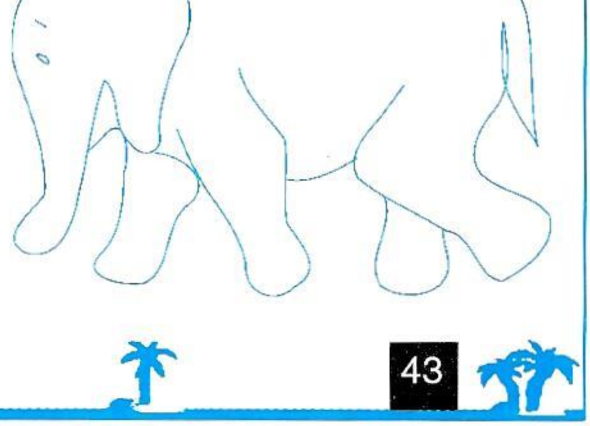

जंगल की व्यथा

सबने छीना तरुवर मेरा,
छीन लिया संसार।
लूटा आकर घर को मेरे,
छूट गया घरवार।

ये स्वच्छंद हम, ये निर्द्वन्द्व हम,
विचरण करते अपने घर में।
कभी न कांपे किसी के डर से,
छीना ये अधिकार। सबने छीना.....

नहीं कोई था भय हमें अब तक,
तब ये बिल्कुल निर्भय हम सब।
चंचल धारा पीने वाले,
हम जंगल में जीने वाले।
सारी धरती थी तब अपनी,
ये जमीं थी, तब तो सबकी।
पर अब हम तो हो गये हैं,
बिल्कुल बेघरवार। सबने छीना.....

भूल गये क्यों औरों को तुम,
हम भी यहीं हैं, हो कहाँ गुम,
हे मानव क्यों तुमने छीना,
मेरा हराम कर दिया जीना।
न अब पानी, नहीं है खाना,
अपने घर में नहीं है दाना।
सिर्फ भरो नहीं अपने घर को,
थोड़ा हिस्सा मुझे भी दे दो,
भीख नहीं अधिकार। सबने छीना.....

जागो अब भी, संभलो अब भी,
हम सब पूरक एक दूजे के।
रह सकते हैं साथ सभी के,
मत तोड़ो प्रकृति के नियम को।
मत छेड़ो हम जीव–जनों को,
करके देखो, जी न सकोगे,
ये हलाहल तुम पी न सकोगे।
मैं नहीं तो पृथ्वी एकदम जैसे निराकार।
सबने छीना तरुवर मेरा

अनिल कुमार सिंह
वाल्डलाईफ ट्रस्ट ऑफ इडिया, नई दिल्ली

राष्ट्र की समस्या

नज़र लगी है आज राष्ट्र को,
स्वार्थ पुष्ट करने वालों की।
जटिल समस्या बढ़ी राष्ट्र की,
मौज हुई रखवालों की।।

एक ओर गरीब बिलख रहे,
भूख, भय, और बेगारी से।
कहीं महफिलें सज रहीं,
माँस–मदिरा के प्यालों से।।

एक–एक के दस–दस बंगले,
नकदी कई करोड़ों में।
कहने को तो सेवक हैं,
पाँचों उंगली हैं घी में।।

न्याय व्यवस्था ऐसी पतली,
पोतों तक प्रकरण चलता है।
न्याय द्वार पर गर न जायें,
शैतानों को बल मिलता है।।

आकांक्षा है आज राष्ट्र से,
शीघ्र न्याय दिलाने की।
आस्था की यदि नींव हिल गई,
आयेगी घड़ी संकट की।।

भुवन चन्द्र उपाध्याय
भा.व.सं., देहरादून

बदलता परिवेश

वन्यजीव वन में करें स्वछंद विचरण,
वन्यजीवों का वन में ही करें हम संरक्षण ।
कभी भी वन्यप्राणियों का न करें हम भक्षण,
वन में वन्यजीवों के साथ होता हम सबका मनोरजंन।
बाघ, तेंदुओं व शेरों पर आई है विपदा भारी,
साधु संत भी आज बन गए चोर शिकारी।
गर इसी प्रकार चोर शिकारी करते रहे अपनी कारगुजारी,
लुप्त हो जायेगी बाघ, चीतों व शेरों की प्राणी जाति सारी।
नैतिकता कितनी गिरी और है जर्जर,
आज अपनों ने ही घोंपा है अपनों का खंजर।
है आज यहाँ बेईमान एक से एक बढ़ कर,
नेता, अफसर, संतरी रहे अपनी जेबें भर।

प्रद्युम्न प्रसाद सिंह
118, लोहांचल, सैक्टर–12
बोकारो स्टील सिटी, बोकारो

पर्यावरण संदेश

1. पर्यावरण बचाना है धर्म हमारा, वृक्षारोपण है कर्म हमारा।
2. वृक्षारोपण है धर्म महान, एक पेड़ सौ पुत्र समान ।
3. वृक्ष हमारे जीवन दाता, इनका सबसे सच्चा नाता।
4. पेड़–पौधे पृथ्वी के आभूषण, करें भू–संरक्षण, मिटायें प्रदूषण।
5. बंजर धरती रहे न खाली, सब मिलकर लायें हरियाली।
6. वृक्षों से मिलते सुन्दर उपहार, पतझड़, सावन, बसंत–बहार।
7. अगली पीढ़ी को तोहफा नेक, बच्चा एक और पेड़ अनेक।
8. जब हरियाली हो चारों ओर, तब बढ़े मानव विकास की ओर।
9. वन और जीव हैं जीवन की आस, इन सबका तुम करो न नाश।
10. काटोगे यदि हरी डाल, साँसों से होंगे कंगाल।
11. खुशहाली है हरियाली से, वन उपवन की रखवाली से।
12. अधिक वृक्ष और कम संतान, तभी बनेगा देश महान।
13. धरती पर जब तक वन हैं, तब तक ही इस पर जीवन है।
14. बनें प्रकृति का हम संबल, इसमें है हम सबका मंगल।
15. वृक्ष लगाने का करो विचार, वृक्ष हैं जीवन का आधार।
16. शुद्ध हो हवा, स्वच्छ हो पानी, स्वस्थ रहेगा हर एक प्राणी।
17. पेड़ लगाओ, पेड़ बचाओ, मानव का अस्तित्व बचाओ।
18. प्राणवायु के हैं वृक्ष आधार, करे न इनका निर्मम संहार।
19. वृक्ष से है जीवन का नाता, अंत समय तक साथ निभाता।
20. प्रदूषित जल और वायु, कम करते हैं सबकी आयु।

नवीन चन्द्र काण्डपाल (संकलनकर्ता)
भा.व.सं., देहरादून

क्या बाघ आदिवासी एवं जंगलों का सह अस्तित्व संभव है ?

(हिन्दी वाद–विवाद प्रतियोगिता में उक्त शीर्षक के विपक्ष में बोलकर प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले उद्‌बोधन के अंश)

ए.के. दुबे

भा.व.सं., देहरादून

अखिल ब्रहमाण्ड में पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है, जिस पर जीवन है। यह जीवन मनुष्य जीव–जन्तु और पेड़ पौधों के रूप में सम्पूर्ण पृथ्वी पर दिखाई देता है। ऊँचे–ऊँचे हिमशिखर कल–कल करती नदियाँ, उमड़ते सागर, घुमड़ते बादल, बदलते मौसम, महकती मिट्टी हरे–भरे पेड़, नाचते मयूर और कुलांचे भरते हिरण इस धरती को अनुपम सौन्दर्य प्रदान करते हैं।

इस धरती के नैसर्गिक सौन्दर्य को कायम रखने के लिये एक बात और समझने की है कि मनुष्य एक न्यासी है, जिसे आने वाली पीढ़ी को प्रकृति को उन्नत स्थिति में प्रदान करना है। अगर एक न्यासी अपने कर्तव्य को पूरी जिम्मेदारी से सम्पन्न नहीं करता, तो यह उसका अनैतिक कृत्य समझा जायेगा। भारतीय मूल्य है, प्रकृति का पोषण व दोहन करना, न कि शोषण करना। समझने की दृष्टि से हम कह सकते हैं कि गाय का दोहन करते हैं – वह हमें दूध देती है, परन्तु दोहन से पूर्व हम उसका पोषण करते हैं, अतः उक्त दोहन नैतिक कार्य है। यदि बिना पोषण के दोहन करते हैं, तो यह शोषण कहा जायेगा।

हमारे सन्दर्भित विषय में तीन प्रमुख बिन्दु हैं – बाघ आदिवासी एवं जंगल। बाघ, भारतवर्ष का राष्ट्रीय पशु है। भारतीय जंगल पर बाघ का एकछत्र साम्राज्य है। जंगल में ही नहीं, भारतीय जनमानस में भी बाघ का स्थान अद्वितीय है। दुर्गा के वाहन के रूप में भारतवर्ष के प्रत्येक क्षेत्र में बाघ को दैवी शक्ति के प्रतीक के रूप में देखा जाता है ।

जंगल का बाघ, मानव आबादी से दूर झाड़ियों के पर्दे के पीछे अत्यन्त रहस्यमय किन्तु अनुशासित ढंग से रहता है। डा0 आर0एल0 सिंह ने लिखा है कि "जिस जंगल में पचास–साठ बाघ रहते हों, उसी में हफ्तों घूमकर भी उसकी एक झलक देखने को तरस जायेंगे। यदि किसी पर्यटक को जंगल में भ्रमण के दौरान बाघ की झलक देखने को मिल जाती है, तो वह अपने को धन्य समझने लगता है।"

आदिवासी, आदिम जाति, जनजाति, वनवासी, अनुसूचित जनजाति आदि किसी भी नाम से हमारे समाज में पहचाना जाने वाला वह वर्ग है, जो प्रायः जंगलों, पहाड़ों और दूर–दराज़ के इलाकों में रहकर आधुनिक सभ्यता के लाभों से वंचित, प्रगति की दौड़ में पिछड़ा, शिक्षा तथा जागरण के वरदान से प्रायः अछूता और शोषण का शिकार है।

वन एवं आदिवासी एक दूसरे के पूरक हैं। वन आदिवासियों के लिये दाता, त्राता एवं अभिरक्षक हैं। जहाँ से उन्हें खाद्य पदार्थ, रोजगार आर्थिक समृद्धि एवं उनकी संस्कृति के विकास को बल

मिला। वनों से जहाँ उन्हें फल–फूल, ईधन, चारा, घर बनाने की लकड़ी, जीवनदायिनी जड़ी–बूटी आदि मिलती है, वहीं उनके गहरे मनोभावों को सन्तोष मिलता है। वनों में रहने के वे इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि उन्हें बाहर ले जाया जाये, तो वे कठिनाई अनुभव करते हैं।

सवाल यह उठता है कि वन, आदिवासी एवं बाघ का सह–अस्तित्व सम्भव है ? ऐसा प्रश्न उठता क्यों है ? आदिवासी हज़ारों हज़ार सालों से वनों में रहते आये हैं। परन्तु अगर आज यह प्रश्न खड़ा हो रहा है, तो कुछ न कुछ कारण अवश्य होगा। बिना आग के धुआँ उठता नहीं है।

पहले कभी आदिवासी एवं जंगल एक दूसरे के पूरक हुआ करते थे, वहीं वे आज वनों एवं वन्यजीवों विशेष कर बाघों के दुश्मन बन गये हैं। चूंकि आदिवासी जंगलों में रहते हैं एवं इनकी आजीविका मुख्यतः जंगलों पर ही निर्भर हैं। जंगलों को काटकर लकड़ी का प्रयोग जलाने एवं आवास निर्माण में करते हैं, जिससे जंगल सिकुड़ते जा रहे हैं। परिणामतः बाघों का आवास क्षेत्र कम होता जा रहा है, जो बाघों की संख्या को प्रभावित करता है।

कभी–कभी लोग आदिवासियों के पक्ष में यह तर्क देते हैं कि आदिवासी वृक्षों की डालियाँ ही काटते हैं। यहाँ यह कहना चाहूँगा कि बाघ को ठंडा प्रदेश पसन्द है। डालियों के कटने से सूरज की किरणें सीधे ज़मीन पर पड़ती हैं, जिसकी गरमी से बाघ असहज महसूस करते हैं, परिणामतः उनका वासस्थल प्रभावित होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के तहत् एक तिहाई भाग पर जंगल होना चाहिये। परन्तु भारत वर्ष में यह क्षेत्रफल मानक से बहुत कम है। कटते जंगल एवं कम होते वन्यजीवों की वजह से कभी–कभी बाघ बाहरी क्षेत्र में भी शिकार के लिये बाहर जाते हैं, जहाँ वे घात लगाकर बैठे शिकारियों के शिकार बन जाते हैं।

जंगली जानवर, पालतू मवेशियों एवं आदिवासियों में वन उत्पादों के दोहन में सीधी प्रतियोगिता है। आदिवासियों के मवेशियों के लिये घास चाहिये। जिससे हिरण, खरगोश जैसे जंगली जानवरों, जो कि बाघों के प्रमुख आहार है, के लिये घास की कमी हो जाती है, जो प्रत्यक्षतः बाघ की जीविका को प्रभावित करती है ।

आदिवासियों को भी अपने स्वस्थ जीवन के लिये प्रोटीन की आवश्यकता होती है। वे बाजार जाकर मांस नहीं ख़रीदते। वे जंगली जानवरों को मारकर मांस की आवश्यकता पूरी करते हैं, जिसका प्रभाव बाघों की संख्या पर पड़ता है। भोजन की कमी के कारण बाघ दिन भर भोजन की तलाश में भटकते रहते हैं, जिससे उन्हें प्रजनन का समय नहीं मिल पाता है, जिसके फलस्वरूप इनकी जनसंख्या घट जाती है।

आदिवासी, अपनी जीविका के लिये पशुपालन भी करते हैं। अधिकाँशतः बाघ इनके पालतू मवेशियों का भक्षण कर जाते हैं। आदिवासियों में उनके नुकसान से प्रतिशोध की भावना जागृत होती है एवं इस नुकसान को सहन करने के लिये तैयार नहीं होते। शोध के दौरान बहुत सारी ऐसी घटनायें प्रकाश में आई हैं कि आदिवासियों द्वारा बाघों को विष देकर मार दिया गया, जिससे बाघों की जनसंख्या प्रभावित हुई है।

मानव की बहुत सारी आवश्यकतायें होती हैं। आदिवासियों को भी बहुत सारी आवश्यकतायें होती हैं। बाहरी दुनिया के सम्पर्क में आने के बाद इनकी आवश्यकताओं में भी वृद्धि हुई है, जिनकी पूर्ति के लिये पैसों की आवश्यकता होती है। कुख्यात ऐसे लोगों पर नजर रखे रहते हैं और मौका मिलते ही पैसों का लालच देकर बाघों का शिकार करवा लेते हैं। यहाँ यह भी बताना चाहूँगा कि मरे हुये बाघ की कीमत अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में लगभग 5 लाख रूपये से अधिक आंकी गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बढ़ती हुई बाघ की कीमतों के कारण लालच में आकर ये आदिवासी बाघों का सफाया करते हैं।

अतः वर्तमान परिदृश्य को देखते हुए निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं कि जंगल, आदिवासी एवं बाघों का सह–अस्तित्व सम्भव नहीं है।

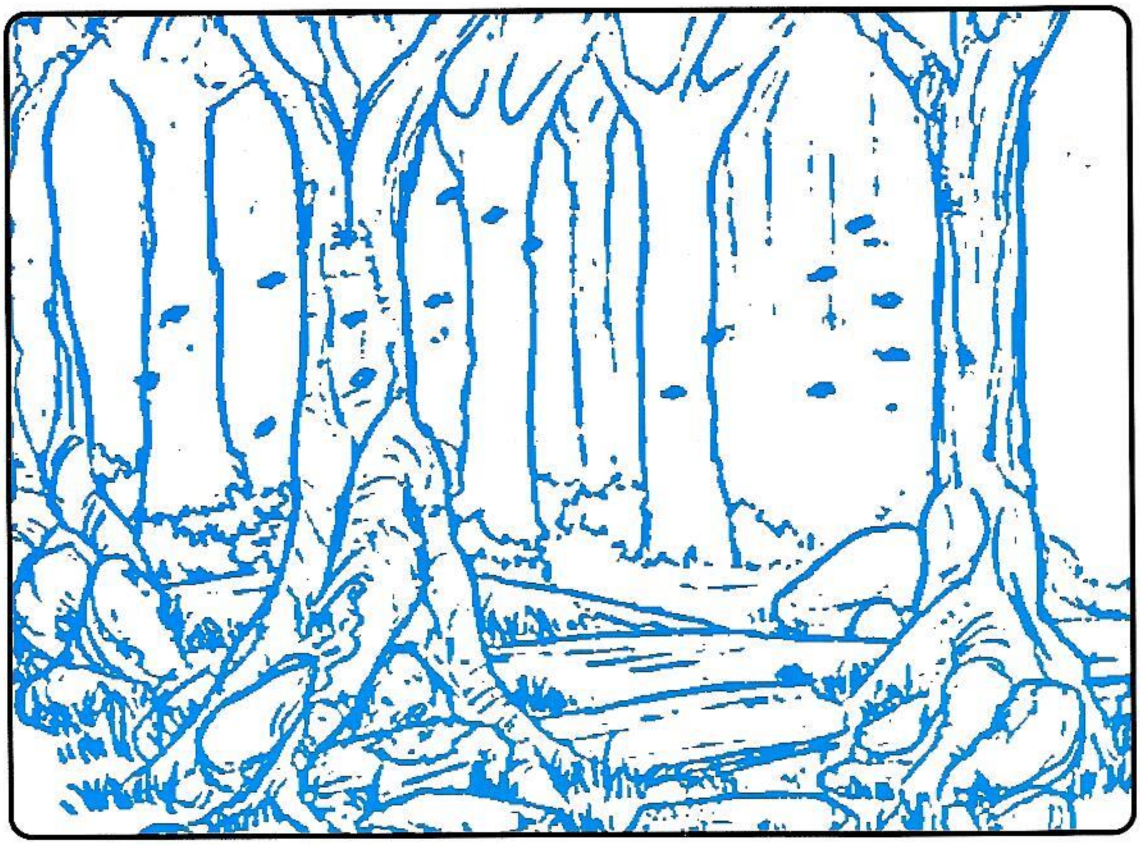

संस्थान में आयोजित हिन्दी गतिविधियां

बलजीत कौर
भा.व.सं., देहरादून

1. विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन

संस्थान में राजभाषा सम्बन्धी प्रगति की समीक्षा एवं विभिन्न गतिविधियों के आयोजन एवं नियमों के अनुपालन आदि निर्णयों के लिए विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया है। समिति के सदस्य हैं:

1. श्री ए. उदयन, कुलसचिव — अध्यक्ष
2. श्री वी.पी. उनियाल, वैज्ञानिक–डी — सदस्य
3. श्री राजेश थापा, सिस्टम मैनेजर — सदस्य
4. श्री के.के. श्रीवास्तव, सम्पादक — सदस्य
5. श्री आशुतोष शर्मा, शैक्षणिक अधिकारी — सदस्य
6. श्री एस.के. खन्तवाल, आंतरिक लेखा परीक्षा अधिकारी — सदस्य
7. श्री पी.के. अग्रवाल, प्रशासनिक अधिकारी — सदस्य
8. श्री ए.के. दूबे, लेखाकार — सदस्य
9. श्री वाई.एस. वर्मा, पुस्तकालयाध्यक्ष ग्रेड–4(2) — सदस्य
10. श्री भुवनचन्द्र उपाध्याय, परिचर — सदस्य
11. श्री नवीनचन्द्र काण्डपाल, वाहन चालक — सदस्य
12. श्रीमती बलजीत कौर, हिन्दी अनुवादक — सदस्य सचिव

2. राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन

संस्थान में राजभाषा के अधिकाधिक प्रयोग एवं कार्यान्वयन के लिए, विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के आयोजन के लिए राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन प्रत्येक तिमाही में एक बार किया जाता है।

3. हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

संस्थान में राजभाषा हिन्दी सम्बन्धी गतिविधियों के अन्तर्गत दिसम्बर 18, 2007 को एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में व्याख्यान हेतु डा. दिनेश चमोला, वरिष्ठ

हिन्दी अधिकारी, भा.पै.सं., देहरादून को आमंत्रित किया गया। कार्यशाला में संस्थान के 70 अधिक अधिकारियों व कर्मचारियों ने भाग लिया।

4. हिन्दी पखवाड़े का आयोजन

संस्थान में प्रतिवर्ष सितम्बर माह में हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया जाता है। सितम्बर 2 से 14, 2007 के दौरान संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजनः

हिन्दी श्रुतलेख प्रतियोगिता – सितम्बर 3, 2007 को आयोजित इस प्रतियोगिता में 12 प्रतियोगियों ने भाग लिया। श्री राजीव मेहता ने प्रथम पुरस्कार, श्री के. के. श्रीवास्तव ने द्वितीय पुरस्कार तथा श्री ए. के. दुबे, लेखाकार ने तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया।

हिन्दी वाद–विवाद प्रतियोगिता – "क्या बाघ, आदिवासी एवं जंगलों का सह–अस्तित्व सम्भव है" विषय पर सितम्बर 6, 2007 को वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें 6 प्रतियोगियों ने भाग लिया। श्री ए.के.दुबे – प्रथम, श्री के.के श्रीवास्तव – द्वितीय, श्री एम.डी गुप्ता – तृतीय स्थान पर रहे।

5. हिन्दी दिवस का आयोजन

14 सितम्बर, 2007 को हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। संस्थान में हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत् आयोजित प्रतियोगिता के विजेताओं को संस्थान के निदेशक, श्री प्रियरंजन सिन्हा द्वारा पुरस्कृत किया गया। उन्होंने अधिकारियों/कर्मचारियों से हिन्दी में अधिकाधिक कार्य करने का अनुरोध किया।

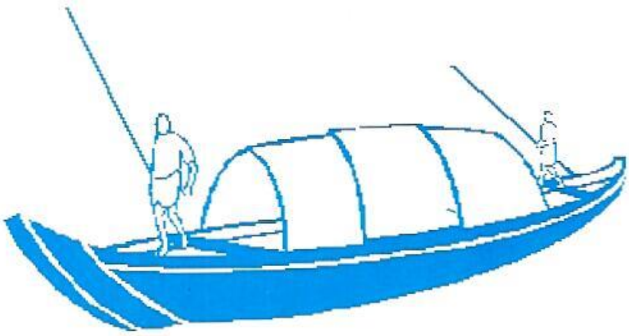

संस्थान में आयोजित हिन्दी गतिविधियां

संस्थान में हिन्दी दिवस के दौरान निदेशक महोदय का सम्बोधन एवं पुरस्कार वितरण समारोह

भारतीय वन्यजीव संस्थान
पो.बॉ. 18, चन्द्रबनी
देहरादून – 248001, उत्तराखंड
दूरभाश : 0135–2640111 से 2640115, फैक्स : 0135–2640117
वेबसाईट : www.wii.gov.in